

राख के फूल

RAKH KE PHOOL

६/८

रानू

RANU

CHAMOSH KI AWAAZ

राख के फूल

RAKH KE PHOOL

६/८

रानू

RANU

SPS

891.433 R 19 R



36866

दीपक पब्लिशर्स

पुस्तकालय संस्करण

स्वाधिकार प्रकाशकाधीन

Acc. No. 36866

Cost Rs. 6.00

Date 14-3-75

483
R 192
U
RAKH KE PHOOL

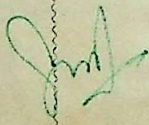
प्रथम संस्करण : 1100
1972

प्रकाशक : दीपक पब्लिशर्स,
माई हीरा गेट,
जालन्धर-1.

मूल्य
६ रुपये

*

मुद्रक : साधू प्रिंटिंग प्रेस,
खिगारा गेट,
जालन्धर-1.



RAKH KE PHOOL BY RANU PRICE : Rs.

मेरी दृष्टि में

एक अंग्रेज दार्शनिक की इस बात से इन्कार नहीं किया, जा सकता कि “रूप और रंग की तरह कला किसी को व्योती नहीं होती।” यही कारण है कि पिछले कुछ वर्षों में नए लेखकों ने अपनी मेहनत और लगन से जीवन के तथ्यों का प्रतिनिधित्व करने वाला ऐसा साहित्य पेश किया है जिससे बड़े-बड़े विख्यात उपन्यासकारों को पसीने आ गए और इन को गगन-चुम्बी आशाओं के महल चकनाचूर हो गए। देश के नए लिखने वालों में एक नाम रानू का है जिस ने थोड़े से समय में सिर्फ दस-पन्द्रह नावल पेश कर के सारे देश का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित कर लिया है। रानू के नावलों में कुछ ऐसी नवीनता, कुछ ऐसी चाशनी और कुछ ऐसी रोचकता पाई जाती है कि पढ़ने वाला इसमें खो जाता है। रानू ने प्रगतिशील शैली में रोमांस को ऐसे अनोखे सांचे में ढाला है कि बड़े-बड़े नामवर लेखकों की ओखें चकाचौध होकर रह गई हैं। रानू अपनी हर नई किताब के साथ आंधी और तूफान की तरह आगे बढ़ता जा रहा है और इसके पढ़ने वालों में दिन प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। और वह दिन बहुत ही नजदीक है जब रानू के हर नावल का हर संस्करण बूत बड़ी संख्या में प्रकाशित होकर भी पाठकों की मांग को पूरा न कर सकेगा। आज दोस्त और दुश्मन इस बात से सहमत हैं कि आने वाला दौर रानू का है। रानू के कलमी नाम से नावल लिखने वाले नौजवान का नाम ‘रैन्ल्ड ऐच. ग्रे’ है। आप पहले अंग्रेजी में कहानियाँ लिखा करते थे। किसी अपने दोस्त

के परामर्श पर हिन्दी और उर्दू में लिखना शुरू किया जो देखते ही देखते लोकप्रियता की उच्चतम शिखर पर पहुँच गया । फिर क्या था । उपन्यास लेखन को उन्होंने अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया । इस समय तक इनके बहुत से उपन्यास पाकेट साइज में छप चुके हैं और यह सभी उपन्यास भारत की लगभग सभी क्षेत्रीय भाषाओं में छप रहे हैं । चन्द एक उपन्यासों को सिलोलाईड पर बदल कर फिल्मों के रूप में पेश किया जा रहा है । मगर हिन्दी और उर्दू में रानू की कृतियाँ अब तक पाकेटों के चक्कर से नहीं निकल सकीं थी इही लिए हम ने रानू के उपन्यासों को पुस्तकाकार (लाइब्रेरी एडिशन) में प्रस्तुत करने का बीड़ा उठाया है । इस विषय में सबसे पहले हम “फूलों की रानी” और “राख के फूल” दो उपन्यास प्रस्तुत कर रहे हैं । अगर लेखक का सहयोग प्राप्त रहा तो इन उपन्यासों के अतिरिक्त इन के दूसरे उपन्यास भी पुस्तको के रूप में हम ही प्रस्तुत करेंगे । हमें आशा है आप रानू के उपन्यास अवश्य पसन्द करेंगे ।

चरणजीत लाल

7-2-72

दीपक पब्लिशर्स

जालन्धर ।

सुन्दरता अंगड़ाई लेकर उसके दिल के द्वार खटखटा रही थी परन्तु गरीबी ने उस पर जंजीर चढ़ा कर यूँ ताला लगा रखा था कि उसके अरमानों का गला ही घुट गया। एक जवानी थी जो दम तोड़ रही थी। परन्तु इसका ज्ञान उसे ज़रा भी नहीं हुआ इसका ज्ञान करने की उसे चाह ही नहीं हुई। चाह होती भी किस प्रकार? वह तो एक मोटर ड्राइवर की लड़की थी—गरीब मोटर ड्राइवर की गरीब लड़की। परन्तु इस गरीबी पर उसे अफ़सोस नहीं हुआ। वह जानती थी उसके पास एक कला है—एक सुरीली आवाज़, शहद के समान मीठी, लहरों के समान बहती तथा उतार-चढ़ाव करती हुई आवाज़, जिसे सुन कर किसका मन इसमें डूब जाने को नहीं चाहेगा? वह तो खुद ही ऊपर से नीचे तक एक कला का उदाहरण थी। जब फूलों से लदी एक टहनी के समान वह सिर झुका कर खड़ी होती तो ऐसा लगता जैसे एक मूर्ति हो—संगमरमर की गुड़िया सी मूर्ति, जिसमें कलाकार ने अपनी आत्मा भरने के बाद ही कांपते हाथों से बनाया था ताकि इसमें कोई कमी न रह जाए।

उसे प्यार करना नहीं आता था। उसे नफ़रत करना भी नहीं आता था। खामोशी और प्यार में डुबी रहने वाली वह एक अजीब-सी लड़की थी जिसे अपने ऊपर से वीत जाने वाले तूफ़ान की आहट तक नहीं मिलती। पहाड़ों से घिरी झील के ठहरे हुए पानी के समान खामोश, हलचल से बेखबर, दायरों और भंवर से अपरिचित।

राख के फूल : : ५

अपने पिता जी के साथ वह हवेली के पीछे एक कोने में बनी छोटी-सी कोठरी में रहती थी जिसके एक तरफ मोटर के दो गिराज थे। हवेली अपनी शान द्वारा रहने वालों के बड़प्पन का पूरा-पूरा प्रदर्शन कर रही थी। सामने एक बड़ा-सा लोहे के सीखचों से बना खूबसूरत रंगों में नहाया एक गेट, चौड़े-चौड़े खम्भों की बांहे थामे हुए था। खम्भों के ऊपर पत्थर के दो सुन्दर मोर पंख फैलाये नृत्य कर रहे थे। मोर के तिरों पर छोटे-छोटे रंगीन बल्बों द्वारा ताज बने हुये थे। गेट से लेकर हवेली के पीछे तक चौकरे-सा अहाता बना हुआ था जिसके अन्दर पोटिको तक लाल गिट्टियों द्वारा दोनों ओर से रास्ते बने हुए थे। रास्ते की बाहों में मेंहड़ी की क्याड़ियों के अन्दर साप-सुथरी हरी-हरी नर्म घास से बना हुआ लान था। लान में कहीं-कहीं कुछ भागों में छोटे-बड़े फूलों के पोथे यूँ लग रहे थे जैसे हरे मखमल पर रंग-विरंगे बेल-बूटे काढ़ दिये गये हों। कुछ खजूर के पेड़ भी थे कहीं-कहीं—दूर-दूर—कुछ इस ढंग से कि बेतरतीब होते हुए भी भले लग रहे थे। हवेली की तीसरी मंजिल की कुछ खिड़कियों में इनके पत्ते हवा के झोंके का बहाना लिये अन्दर झाँक लिया करते थे। हवेली क्या थी किसी राजा का महल।

परन्तु अब यह महल सूना-सूना-सा था। हमेशा इस पर एक उदास खामोशी छाई रहती। हर कोने पर सिसकियाँ उभरती महसूस होतीं। पर चम्पा अपनी याद की कहानी सुनाती मालूम पड़ती। रात भर अँधेरे में मुँह छिपाकर पड़ी हुई ओस सुबह-सुबह आंसुओं की छोटी-छोटी बून्द के समान चमकती मिलती। शायद रात रो रही थी, शायद रात का बहाना लेकर यहाँ का सारा वातावरण रोता रहा है। विल्कुल रायसाहेब के समान, जिनकी जिन्दगी का सौदा आंसुओं से हुआ था, जिनकी खुशियाँ गम की अधिकता का जामा पहन कर इस दुनिया में आई थी। जिनकी जवानी एक नासूर बन चुकी थी। जिनकी आयु पर निराशा ने समय से पहले ही बूढ़ापे की छाप लगा दी थी। जिन्होंने हँसना नहीं सीखा। हँसने की उन्होंने फुसंत ही नहीं निकाली। हँसना उनके लिये जुर्म था, पाप था। हँसी का विचार करते ही उनकी आँखों

में अपने आप ही आंसू आ जाते, जैसे दिल होठों की मुँसुराहट से बगावत कर रहा हो ।

इतनी बड़ी हवेली के वही एकमात्र मालिक थे । लोग उन्हें राय साहेब के नाम से जानते थे जिनके नाम की कपड़े की दो मिलें तो इसी शहर में चल रही थी । चालीस वर्ष की आयु में ही वह साठ साल के बूढ़े दिखाई देने लगे थे परन्तु फिर भी गोरे मुखड़े पर कभी-कभी जवानी की झलक यूँ वापस लौट आती कि उनकी आयु का ठीक अनुमान करना असम्भव हो जाता और यह उस समय होता जब वह बहुत अधिक शराब पीकर अपने आपको धोखा देने के लिये अकेले ही जोर से ठहाका लगाकार हँस पड़ते । आवाज भरी-भरी और डील डोल लम्बा-चोड़ा था । मुखड़े का हर उभार तीखा था कि देख कर ही ऐसा महसूस होता जैसे जवानी बहुत खूबसूरत रही होगी ।

कभी इस हवेली के लान में पहरों पार चांद खिले रहते थे । हवेली दिन-रात दूध में नहाई संगमरमर के समान चमकती रहती थी । रोशनी से जगमगाती रहती थी । हवेली का हर चम्पा घर के छोटे-छोटे भाई-बहनों की चहल-पहल से गूँजता रहता था । तब रायसाहेब के माता-पिता भी जीवित थे ।

पढ़ाई समाप्त होते ही माता-पिता ने उन्हें विदेश भेज दिया । जब वापस आये तो उसने बिना किसी पूछ-ताछ के ही उन्हें एक सुन्दर से बन्धन में बांध दिया । उन्होंने भी कुछ पूछा नहीं । कोई अनुरोध नहीं किया । माता-पिता की खुशी उनकी अपनी इच्छा थी । उनकी आज्ञा का पालन करना उनका बड़पन था और यह सब इसलिये था कि कभी उन्होंने कालेज के समय से लेकर अब तक किसी भी लड़की के लिये अपने में कोई चाह तहीं महसूस की थी । यूँ तो वह कई लड़कियों के साथ घूमे-फिरे, कितनी ही लड़कियों ने उनकी दोस्ती का गलत अनुमान लगाकर उनसे प्यार भी करना चाहा, परन्तु जाने क्यों वह अपने गर्व में डूबे किसी की ओर पल भर भी नहीं झुक सके । शायद अपनी खान-दानी शराफत का असर उनके दिल पर इतना अधिक था कि पराई लड़की के प्रति दिल में कोई बात लाना भी उनके लिये घोर अपराध राख के फूल :: ७

तथा पाप था ।

शादी क्या हुई मानो वहार आये चमन में आकाश से चांद उत्तर आया । अपनी प्यारी-सी ठंडी चांदनी द्वारा उसने चमन की कली-कली, फूल-फूल को जीत लिया । एक-एक पत्ते पर उसके रोनक की छाप पड़ गई ।

पलक झपकते ही तीन-महीने बीत गये । यह तीन महीने उनके जीवन की पलकों में एक पल भर का सपना बन कर आये थे । कितना प्यार उन्हें इन तीन महीनों में मिला । एक पल भी वह अपनी पत्नी से अलग नहीं हुए जैसे तीन महीने की यह एक सुन्दर-सी सुहाग-रात थी—कितनी छोटी सुहागरात जो एक सपना देखते देखते ही बीत गई ! पहली रात तो आंखों ही आंखों में कट गई, एक नई नवेली दुल्हन की सुन्दर संगमरमर की बनी खामोश मूर्ति को देखते ही देखते । कितना प्यार था उसकी खामोशी में कितनी लज्जा थी उसकी झुकी-झुकी आंखों में, जैसे रेशम के पतले-पतले डोरे कांप रहे हो । कितनी इच्छाओं का प्रदर्शन था उसके सुख पतले-पतले होठों की दबी-पबी मुस्कुराहट में, जैसे सारा संसार झुक कर उसके कदमों में आ गया हो । एक अपरिचित अनदेखी लड़की थी वह जिसकी गहरी-गहरी सांसों के साथ सीने के उत्तार-चढ़ाव के अन्दर उसका नन्हा-सा, कोमल-सा दिल धड़क रहा था—नन्हा और कोमल-सा दिल, जिसमें कुंवारी इच्छाएँ जाने कब से जनम ले रही होंगी ।

लगन चढ़ा हुआ था । शादियां हो रही थी । रोज़ ही कहीं न कहीं बेंड-बाजों की आवाज सुनाई पड़ रही थी । एक शादी उनकी समुराल में भी पड़ी, पत्नी की छोटी वहन की । सारा घराना कार से बबरामपुर जा रहा था परन्तु वह नहीं जा सके । समय पर दहेज नहीं तैयार हो सका तो वह रुक गये ताकि दूसरे दिन चले जायें । घर के बाकी लोगो को इसलिये जाना पड़ा क्योंकि उनके पहुँचने की सूचना पहले ही जा चुकी थी । उनके लिये वैसा ही प्रबन्ध भी किया जा चुका था । शादी में कई काम उनके पहुँचने पर ही पूरे हों सकते थे ।

शाम को जब वह दहेज में दिये जाने योग्य जेवर सँभाल कर

६ : : राख के फूल

हवेली पहुँचे तो हर तरफ अँधेरा ही अँधेरा था। रोशनी का गला घुट रहा था। लान की फुलवारी खामोश थी। फूल मुझाए हुए थे। डालियाँ झुक चली थी। हवाओं में ठहराव था। हवेली की जीती-जागती घड़कने बन्द हो चुकी थी, जैसे अठखेलियाँ करती लहरें समतल पानी में बदलकर खामोशी से ठहर गई हों।

उनके पहुँचते ही नौकरों ने उन्हें घेर लिया।

“क्या बात है रामू ?” उन्होंने चौकीदार से पूछा।

परन्तु वह खमोश रहा।

“क्या बात है माली ?”

परन्तु वह भी खमोश रहा।

“क्या बात है ड्राइवर ?”

वह भी खमोश रहा।

सब की आँखों में आँसू थे। सब ही सिसक रहे थे। दिल पर काबू पाकर सब कुछ कह देना चाहते थे, परन्तु जवान जैसे तालू से लग चुकी थी। आवाज गुम हो रही थी।

“क्या बात है ? बोलते क्यों नहीं ?” वह एक दम से चीख पड़े।

और तब ही ड्राइवर की छोटी-सी लड़की ने आगे बढ़ कर कहा :

“बाबू जी, बड़े बाबू जी की कार खाई में उलट गई।”

अचानक आकाश फट गया। बिजली टूट कर सारी हवेली पर, सारे संसार पर गिर पड़ी। धरती उल्टी-सीधी घूम गई। आँखों के सामने अँधेरा छा गया। दिल बैठ गया। हाथों से दहेज का डिब्बा छूट गया। जेवर खुल कर धरती पर बिखर गये। बेहोश होते-होते उन्होंने सुना :

“हाँ बाबू जी, अभी-अभी खबर आई है कि कोई भी नहीं बच सका।”

जीवन कितना विचित्र सपना है। यह सपना कितनी आसानी से टूट कर समाप्त हो जाता है। जीवन भर हाथों से चुन-चुन कर जिन राख के फूल :: ६

मोतियों द्वारा एक-दूसरे की बर्तन बनाने का प्रयत्न किया जा रहा था वह गले में पड़ते ही टूट गयीं—दाने-दाने बिखर गये। जीवन की करवट बदलते देर नहीं लगती परन्तु यह करवट कितनी अनोखी थी, वह सोच भी नहीं सके। हरी-भरी बहार पर पतझड़ की ऐसी बिजली गिरी कि सब कुछ मिट गया, सब कुछ लुट गया, ववदि हो गया। कुछ भी तो नहीं बचा। प्रकृति के भेद इतने विचित्र क्यों होते हैं ? क्या कारण है इसका ?

मनुष्य, मनुष्य के विचित्र कामों का भेद जान सकता है। अपने ऊपर हुए जुल्म का बदला चुका सकता है। सताये जाने का कारण जान सकता है। परन्तु यह भगवान् कैसी वस्तु है ? कैसी ताकत है ? कैसी प्रकृति है ? कोई उससे पूछ नहीं सकता। उस पर किसी प्राकर का दोष नहीं लगाया जा सकता क्योंकि वह किसी की नहीं सुनता, उस समय तक नहीं सुनता जब तक उसका मकसद नहीं पूरा हो जाए। उसकी इच्छाएँ अजीब होती हैं। उसके भेद-भाव की कोई थाह नहीं। उसके मकसद का किसी को ज्ञान नहीं।

उस दिन के बाद फिर कभी हवेली में कोई चिराग नहीं जला। चहल-पहल की कोई आवाज नहीं पैदा हो सकी। कभी फूलों के होंठ नहीं मुसकुराए। हर रात रोती थी। हर सुबह रात की शबनम से तर फूलों की पलकों पर आंसू लिये सिसकती रहती थी।

गम की अधिकता से राय साहेब पागल-से होकर रह गये। मुंह से आवाज निकलना बन्द हो गई। बातें बहुत कम करते। किसी से मिलते नहीं, जुलते नहीं, किसी की सूरत तक नहीं देखते। केवल बन्द कमरे में पड़े रहते। उनकी गुम-सुम ने हवेली को शमशान बना दिया। हर वस्तु उजड़ कर खंडहर हो गई।

हवेली में सब ही नौकर विश्वास योग्य थे, परन्तु यहां का ड्राइवर उनका सबसे पुराना नौकर था। उसने हवेली की देखरेख संभाल ली। हवेली की शान में कोई ऐसी बात नहीं की जो उसकी सेवा पर किसी प्रकार का इल्जाम बन कर प्रकट होती। उसके पवित्र रक्त में वफादारी की बारा थी।

१० : : राख के फूल

समय सँसरे में बड़ी से बड़ी चीट का महरम है। समय की पुकार ने उसे भी जीना सिखा दिया। परन्तु उनके होठों पर कभी कोई मुस्कुराहट नहीं लौटी। वह चमक, वह इच्छा जीवन की आँखों में पैदा नहीं हो सकी, जो उनका कभी न मिटने वाला गर्व था। दिन महीनों और महीने सालों में बीतने लगे तो उन्हें अपने व्यापार की याद आई जिसकी नींव उनके बाप-दादा ने अपने रक्त में डाली थी। उन्होंने हालात से मुकाबला करने के लिए एक बार फिर कमर बांध ली। इतने दिनों में उनकी मिलों में काम करने वाले प्रबन्धकों ने विश्वासघात करके उन्हें लाखों रुपयों का घाटा दे दिया था, परन्तु फिर भी वह निराश नहीं हुए। बम्बई शहर से बाहर की तमाम मिलों को बेचकर उन्होंने व्यापार में फिर पग रखा। बम्बई में उनकी केवल दो मिलें थी जो उनके माता और पिताजी के नाम से प्रचलित थीं। यद्यपि यहां कुछ भी नहीं बदला था परन्तु फिर भी अब जीवन की दौड़ में कदम रख कर उन्होंने खुले आकाश में अपने को अकेला पाया तो यह संसार बिल्कुल अजीब-सा प्रतीत हुआ—बिल्कुल नया-नया-सा।

अब वह सदा अपने को किसी न किसी काम में अवश्य व्यस्त रखते। गई रात तक मिल में बैठे कागजों को उलटते-पलटते रहते। दिल को कभी कुछ सोचने का अवसर ही नहीं देते। परन्तु जब लौटते समय उनकी नजर हवेली के गेट पर पड़ती तो रात का अंधेरा विचारों की धुंध बनकर उनके दिल पर छा जाता। चुपके से विलुड़ी हुई एक तस्वीर ख्यालों में कदम रखकर आँखों में उत्तर आती। तब वह और बेचैन हो उठते। घर का सूनापन उन्हें काट खाने को दौड़ पड़ता। वह अपने आपसे भागना चाहते परन्तु यादों की एक अमिट, अटूट जंजीर उनके दिल के कदमों में बेड़ियां पहना देती। उनकी आँखों में आंसू आ जाते। सिसकते हुए वह अपने कमरे में प्रवेश करते और तड़प-तड़प कर सारी रात नींद की भीख मांगते रहते। परन्तु यह नींद भी उनसे उनकी खुशियों के समान ही रूठ चुंकी थी। हजार बार हाथ फैलाया परन्तु वापस नहीं आई। जल्द ही यह फैले हाथ भी थक गये। दिल का दर्द

राख के फूल :: ११

वर्दीन से बाहर हो गया। वह एक बड़ा बलब की राह दिखाई। जब वह लड़खड़ाते हुए वहां पहुँचे तो ऐसा मालूम हुआ जैसे उनकी चोटों को अच्छा करने वाला एक यहाँ मात्र अस्पताल है, यही एक मंजिल है जहाँ पहुँच कर वह अपने बोझ को उतार सकते हैं। वहाँ कदम रखते ही उन्होंने महसूस किया था कि गम का लवादा हल्का हो रहा है।

क्लब में उनके आने का स्वागत यूँ हुआ जैसे किसी गरीब गांव में एक राजा ने कदम रख दिये हो। उनसे मिलने में लोगों ने गर्व का एहसास किया।

जुआरी

क्लब में हर प्रकार के लोग थे—जुआड़ी, शराबी, कलाकार, फिलासफर और जाने कौन-कौन? सब ही दौलत के ठेकेदार थे। सब ही दौलत के बोझ से दबे अपना-अपना भार शराब के सुरूर में डुबा कर कुछ देर के लिये मशीनी जिन्दगी को भूल जाना चाहते थे। उन कड़ियों को उत्तार फेंकना चाहते थे जो उनकी जान को लगी हुई थीं। मशीन, जो इंसान ने अपने स्वार्थ के लिये बनाई, आज खुद उनका होकर रह गया है। यह इंसान चले जाएँगे, मिट जायेंगे, मर जायेंगे, परन्तु यह मशीनें सदा काम करती रहेगी। शायद इसीलिये मनुष्य उकता कर कभी-कभी इनसे दूर भागने लगता है।

जल्द ही राय साहेब क्लब के वातावरण से यूँ घुलमिल गये मानो वह यहाँ के एक पुराने सदस्य थे। ब्रान्डी, हिवस्की और जिन के मिले-जुले नशे ने उन्हें जीवन की वह रोशनी दिखाई जहाँ शान्ति था—एक अजीब ही शान्ति, सुरूर से भरी हुई, जिसे पाकर पिछली कोई भी याद दिल में प्रवेश नहीं कर पाती थी।

जब कार हवेली में प्रवेश करती, जब ड्राइवर गेट खोलता और वह झूमकर बाहर निकलते और जब वह लड़खड़ाते कदमों से अपने कमरे की ओर जाते तो आधी से भी अधिक रात बीत चुकी होती।

मोटर गिराज के बगल में बनी ड्राइवर की छोटी-सी कोठरी में अंधेरा किये खिड़की द्वारा वह लड़की रोज ही राय साहेब को आधी १२ :: राख के फल

रात गये आता देखतो रही थी। हवेली में रोशनी होमी। नौकर दौड़ कर दरवाजा खोलता। वह कमरे में प्रवेश करते। आते ही खड़े-खड़े वह अपने हाथों से अंग्रेजी शराब की बोतल खोलते—फिर सोफे पर बैठ कर गिलास में डालते और पीते रहते—पीते रहते, और जब नौकर खाना ले आता तो बड़ी कठिनाई से दो-चार कौर मुंह में डालकर वह बेसुध हो जाते, कभी पलंग पर तो कभी सोफे पर ही। जब नींद आंखों को आकर दबोच लेती तो एक नौकर बर्तन ले जाता, दूसरा उनके जूते उत्तार देता तथा तीसरा उनकी टांगें सीधी करके लिटा देता। सब जानते थे कि यहीं चन्द घड़ियां उनकी शांति की है जिसमें वह कभी तड़प नहीं सकते। वह अपनी कोठरी से सब कुछ चुप-चाप देखती रहती। और जब सामने विजली की रोशनी बुझ कर हल्के नीले रंग की वस्त्र ओढ़ लेती तो उसे कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता। वह चुप चाप वहां सो रहती जहां पास में उसके पिता का पलंग लगा होता। काफ़ा देर तक वह जागी-जागी लेटी रहती जैसे उसे किसी बात की प्रतीक्षा हो। जैसे अभी कोई उसे बुलाने आयेगा।

राय साहेब के जीवन की दुर्घटना उसके सामने बचपन में ही हुई थी। अब राय साहेब को इस अवस्था में देखते देखते कई वर्ष बीत रहे थे। इन वर्षों की दूरी ने उसके बचपन को छीन कर उसे ऐसी राह पर डाल दिया था जहां से दो कदम बाद ही उसकी जिन्दगी की बहार शुरू होने वाली थी। वह एक कली से फूल बन चुकी थी परन्तु यह फूल अभी पूरी तरह नहीं खिला था। उसे राय साहेब से एक दिल्ली सहानुभूति थी, एक अजीब ही प्यार था उसके कोमल-से दिल में, जिसकी उसे खुद भी खबर नहीं हो सकी। वह केवल राय साहेब को देखा करती—सुबह देर से उठकर उन्हें जाते ए—रात में देर से आते हुए। हु उनकी सेवा के लिए उसका दिल तड़प-तड़प जाता।

कभी-कभी राह साहेब सपनों से यूँ जागते कि उनका नशा एक ही झटके में उत्तर जाता। रोशनी जलाकर वह पूरी आवाज से चीख पड़ते। एक ही आवाज पर कई-कई नौकर उनके कदमों में जपस्थित हो जाते।

और पल भर में वह उनके सामने उपस्थित हो जाती ।

पहली बार छोटी-सी आयु में जब उसके पिता ने आधी रात में उसे उठाया तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ था । वह आंखें मलते हुए उठकर जाने से घबरा रही थी । तेरह-चौदह वर्ष की वह सुन्दर-सी कली उनके सामने जाकर कांपते हुए खड़ी हो गई थी ।

“पारो...” राय साहेब बोले थे — “मुझे वह गीतसुनाओ, वही गीत जो तुम्हारी मालकिन गाया करती थी, इसी प्यानो पर । तुम्हें तो याद है ना ?”

“मुझे...?”

“हां, तुम्हें । तु तो रोज ही उनके साथ गुनगुनाया करती थी ।” गिलास को शराब से फिर भरते हुए वह बोले थे — “अब तो तीन साल बीत चुके हैं ।”

“हां सरकार...”

और फिर वह गाने लगी—गाती रही—वही गीत—वही संगीत, जो कभी उसने अपनी मालकिन से सीखा था । उसकी सुरीली आवाज शहर की लोरी बनकर उनके कानों में उतरती रही जब तक कि वह आधा गिलास शराब से भरा छोड़ कर नींद की आगोश में नहीं पहुँच गये थे ।

पारो ने उन्हें अपने हाथों से चादर ओढ़ा दी थी । बत्ती बूझा दी थी । खिड़कियां और दरवाजे बन्द कर दिये थे और फिर खामोशी से दवे कदमों अपनी कोठरी में वापस चली आई थी ।

तब से पारो की आदत पड़ चुकी थी । उसे कई बार उनके पास यूँ ही जाना पड़ा था । जिस दिन नहीं बुलाया जाता वह पूरी-पूरी रात इस सेवा की प्रतीक्षा में बिता देती । एक अजीब-सी शांति थी इस अनोखी सेवा में । उसके दिल की गहराई में ठंडक भर जाती ।

आज भी वह इसी बात की प्रतीक्षा कर रही थी ।

पारो की इस प्रकार की सेवा से हवेली के सब ही नीकरो को
१४ : : राख के फूल

खुशी थी। उसकी आवाज राय साहेब को थोड़ी देर की नींद क्या प्राप्त होती मानो सारे नौकरों के दिल पर शांति की एक लहर-सी दौड़ जाती। सब से अधिक गर्व इस बात का पारो के पिता को था जो सालों से हवेली की चारदीवारी में सांस लेते आए थे, जिन्होंने वर्षों इस घर का नमक खाया था। इतना दुखी होने के पश्चात् भी राय साहेब ने कभी अपनी सहायता से किसी नौकर को निराश नहीं किया। त्योहारों पर कपड़ों और पैसों से वह पहले के ही समान सब की मदद करते रहे। ऐसी बातों से उन्हें एक संतोष-सा प्राप्त होता। एक शांति-सी मिलती। परन्तु स्वयं वह कभी किसी की खुशी में सम्मिलित नहीं हुए। दूसरों को खुश देख कर जब उनकी आंखें भर आती तो वह एक आह भर कर खामोश हो जाते।

समय पंख बांधे उड़ा जा रहा था—उड़ता ही गया। एक वर्ष और फिर जल्द ही पूरे छै वर्ष बीत गये। इतने वर्षों का समय पाकर दुनिया ही बदल गई। दुनिया के साथ-साथ पारो भी बदल गई। बचपन की वह कली अब फूल के समान खिल कर हवेली की जान, हवेली की आत्मा बन चुकी थी। इस युग में राय साहेब ने तरस खाकर उसके लिए ट्यूटर रख दिया था जो प्यानो पर उसे संगीत सिखाने-के साथ-साथ पढ़ाई का भी ध्यान रखता था। उसकी आवाज में जादू था जो गले द्वारा शहद में डूबकर निकलता, इस तरह कि कभी-कभी उसके ट्यूटर भी उसके संगीत में खो जाते। अपनी लचीली और पहाड़ी ढाल-वानों के समान ऊँची-नीची आवाज को वह इस तरह लय देकर गाती कि हवेली का कोना-कोना झूम उठता। प्यानो उसके अधिकार में यूँ था जैसे वह स्वयं घर की मालकिन हो, राय साहेब ने उसे हर प्रकार की स्वतंत्रता दे रखी थी परन्तु उसने कभी इससे कोई नाजायज फायदा नहीं उठाया। संगीत ही उसकी विद्या थी, संगीत ही उसके मन का सन्तोष। संगीत के आगे ही वह अपने आपको बलि चढ़ाने पर तत्पर थी। परन्तु यह बलि उसी हालत में भेंट चढ़ सकती थी जब केवल एक ही देवता उसे ग्रहण करे। केवल एक ही देवता, जो उसके मन मन्दिर में जाने कब से विराजमान था।

राख के फूल : : १५

इन छै वर्षों में ~~अक्सर~~ ~~प्रित्तिको~~ ~~उत्सव~~ ~~श्री~~ ~~वयु~~ ~~लिप्ता~~ । एक नोकर

और भी कम हो गया । राय साहेब भी बूढ़े हो गये । चालीस साल की आयु में ही सिर के बाल सफेद हो चुके थे । डील-डोल में भी पहली-सी जान नहीं रही । शराब और सिगार उनकी खुराक बन गयी । पिछला जीवन सपनों की एक धुंधली चादर बन कर दिल से बहुत दूर हो गया । नौ साल पहले का जीवन याद भी करते तो दिल में वह तड़प नहीं उठती वह टीस नहीं उठती जो पहले थी । परन्तु यह सब केवल दिन के समय ही होता । रात उनकी जिन्दगी की सारी याद एक पल के लिए भी नहीं छीन सकी । वह सदा शराब के मोहताज रहे, वह हमेशा रातों की नींद के मोहताज रहे पारो की मीठी तान में डूबी उस लोरी के मोहताज रहे जो उनकी पत्नी के गले से निकल कर वातावरण की सुगंध किया करती थी । अब भी जब शराब के नशे में डूबी उनकी नींद बीच रात में टूट जाती, जब रात का कोई भूला-भटका सपना उन्हें जगा कर परेशान कर देता तो वह तुरन्त पारो को बुला लेते—गीत की बस एक ही रट होती, एक ही तान, एक ही सुरीलापन जो उनके दिल में उत्तर कर आंखों के पट बन्द कर देता । उनकी आंखों के पट के साथ-साथ हवेली के तमाम चम्पों को नींद की गोद में भेज देता । प्यानी बन्द करके वह दवे कदमों उनके पास चली आती । बहुत देर तक एकटक उन्हें देखती रहती और फिर जब आंखों में आंसू आ जाते तो किसकियां दवा कर वह सदा के समान उन्हें चादर ओढ़ाती, बत्ती बुझाती, दरवाजा बन्द करती और फिर सिर झुकाए तेज-तेज कदमों से अपनी कोठरी में आ पड़ती । उसका जी चाहता वह रो रो ले । रो-रो कर अपना मन हल्का कर ले जैसे राय साहेब का सारा गम उसी के कांधों पर भार बन कर छाया हुआ था ।

अक्सर जब राय साहेब क्लब से देर में लौटने के बाद शराब के नशे में चर आते ही लेट पड़ते तो उसे बरी तरह इन्तजार होता कि वह उसे आंख खुलते ही बुलायेंगे । सारी-सारी रात बीत जाती उसे प्रतीक्षा करते हुए और जब वह बिल्कुल ही बेसुध होकर सुबह तक सोए रहते तो उसे अजीब-सी बेचैनी महसूस होती । अजीब-अजीब बातें सोच कर उसका मन रो पड़ता । एक दर्द-सा उसके मन में उठता जिसका ठीक-

१६ :: रात के फूल

ठीक अर्थ निकालने से वह वंचित थी। यह कैसी सहानुभूति है ? कंसा दर्द है ? कैसी इच्छा है ? कैसी अभिलाषा है ?

एक दिन जब राय साहेब फैकटरी गये हुए थे, कि जाने कैसे पारो को अपनी आयु का विचार आया। यह जीवन कब तक यूँ ही कटता रहेगा ? कब तक वह यूँ ही राय साहेब की सहानुभूति के सहारे जीवित रहेगी ? आखिर उसके जीवन का मकसद क्या है ? उसे किसके लिए जीना चाहिए ? बापू जीवित होते तो कब ही उसके हाथ पीले कर देते। यह १६ वर्ष की आयु यूँ तो नहीं भटकती। अब तक तो शायद वह दो बच्चों की माँ भी बन जाती। किसी देहात में उसकी ससुराल होती। आँगन में बैठी वह चरखा कातती और छोटे-छोटे दोनों बच्चे मिट्टी में इधर-उधर खेल रहे होते। छिः कितनी बुरी बात होती ! देहात की जिन्दगी भी कोई चीज है ! परन्तु...परन्तु इस भटकते बेमकसद और चिंतित जीवन से तो अच्छी ही होती। जीवन कट जाने का एक सहारा तो उसके पास होता !

शाम होने में अभी बहुत देर थी। वह अपनी कोठरी से बाहर आई। लान पार करती हुई हवेली में प्रवेश कर गई, बिल्कुल निडर और लापरवाह-सी होकर, जैसे हवेली की वही एक मालकिन थी। थी भी कुछ ऐसी ही बात। राय साहेब ने उसकी ही देख-रेख में हवेली का भार सौंप रखा था। मालकिन का कमरा बन्द था। इसी कमरे में कभी राय साहेब उनके साथ रहा करते थे। उसने बहुत इतमिनान से ताला खोला और अन्दर पहुँची। कमरे की सफाई वह स्वयं अपने हाथों से ही किया करती थी। एक-एक वस्तु को उसी प्रकार सुन्दरता से रखती थी जिस प्रकार मालकिन अन्तिम बार रख कर सदा के लिये चली गई थी। कमरे में पहुँच कर वह एक श्रृंगार मेज के सामने खड़ी हो गई जहाँ उसके कद से भी बड़ा एक आइना चादर में ढँका हुआ था। उसे हटा कर उसने अपने को गौर से देखा। बिखरी लटें रह-रह कर उसके गुलाबी गालों को चूम रही थी। मुखड़े पर कोई बनावट, कोई श्रृंगार नहीं था। एक खिले हुए फूल पर मानो गर्द-सी जमी हुई थी। कानों में बाली न हाथों में चूड़ियाँ। सस्ते सूती कपड़ों में लिपटी यह एक विधवा के समान लग

राख के फूल :: १७

रही थी जिसे शादी के बाद कभी अपने पति को देखने का सीभाग्य नहीं प्राप्त हुआ हो। वह अपने मुखड़े पर छाई वदनसीवी की रेखाएँ पढ़ना चाहती थी जिसने उसे आकर्षक बनाने के बाद भी उसको देवता के प्यार से वंचित रखा था। आखिर उसमें क्या कमी है ? कमल-सी बड़ी-बड़ी आंखें, लम्बी-लंबी पलकें, पतले-पतले होंठ, गुलाब के समान सुख, मानो दो छोटी-छोटी कलियां आपस में मिल रही हों। छोटी-सी नुकीली नाक, कोमल इतनी कि हर सांस के साथ नथने फूल रहे थे।

बहुत देर तक वह अपने को यूँ ही घूरती रही। अचानक एक विचार उसके मन में गुदगुदी लेकर यूँ आया कि मुस्कराहट का अनुभव करते हुए भी वह कांप गई। यह विचार उसके दिल में जाकर यूँ बैठ गया कि न चाहते हुए भी वह इसकी मिठास से दूर नहीं रह सकी। उसने अलमारी खोली। इसकी चाभी भी उसी के अधिकार में थी। बहुत सुन्दरता से कीमती कपड़ों की एक बहुत बड़ी तह जमी हुई थी। उसने एक साड़ी निकाली—सुख, और फिर एक सुख ब्लाउज भी निकाला। फिर नीचे भाग से सुख चम्पलें निकाली। दराज खोल कर बहुत सारे जेवर निकाले। आइने के सामने लाकर उसने सब चीजें आहिस्ता से रख दी। फिर गुसलखाने में प्रवेश किया। नहा कर वह वालों को पोंछती हुई बाहर आई और आइने के सामने श्रृंगार मेज से सटकर बैठ गई। उसकी खुली लटों को देखकर आइने की चमक भी मद्धिम पड़ गई। कुछ पल बाद उसने अपने आपको सँवारना आरम्भ किया। जाने क्यों ऐसा करते हुए उसका दिल जरा भी नहीं धड़का। उसे कोई संकोच नहीं प्रतीत हुआ। एक ड्राइवर की लड़की, एक नौकरानी, जिसके टुकड़ों पर पल कर वह जीवन की सबसे सुन्दर अवस्था में पहुँच चुकी थी, उसकी वस्तुओं को बिना अधिकार छूते हुए वह जरा भी नहीं कांपी। उसकी सुन्दरता ने आंखों में गर्व का ऐसा शीशा पहना दिया था कि उसे कुछ दिखाई ही नहीं दिया, कुछ सुझाई ही नहीं दिया। वह करती गई, वही, जो उससे अपने आप हुआ जा रहा था। पूरी तरह श्रृंगार करके अपने को जब उसने देखा तो विश्वास ही नहीं हुआ कि शीशे में यह उसका

प्रतिबिम्ब है। उस पारो और इस पारो में कितना अन्तर था ! कौन कह सकता था—वह इतनी बड़ी हवेली की बहू नहीं है ? सुख जोड़े में उसका गुलाबी मुखड़ा इतना अधिक सुख था कि पहाड़ों के पीछे नजर आती शाम की लाली भी शर्म से मुँह फेर ले, सूर्य समय से पहले ही अपने विश्राम-गृह में भाग जाये। सोने के चमकते हार तथा चूड़िया उसके शरीर के रंग में घुल-मिल कर अपना गौरव प्राप्त कर रहे थे। उसकी सांसे तेज-तेज चलने लगी। दिल धड़क उठा। आँखों में रेशमी डोरे झलक पड़े और होंठ कांपने लगे, जैसे हवा के एक झोंके ने गुलाब की पंखुड़ियाँ हिला कर रख दी हों। न चाहते हुए भी उसे विश्वास हो गया कि वह इस समय संसार की सबसे अच्छी सुन्दरी है जिसे एक कुएँ से बाहर आकर खुले आकाश का चांद बनने का कभी अवसर ही नहीं प्राप्त हुआ। भगवान ने उसे इतना सुन्दर बना कर गरीबी की चारदीवारी में क्यों बंद कर रखा है ? क्यों इस लाल को गुदड़ी में छिपा कर रखा है ? क्यों यह मजबूरियों का शिकार है ?

अचानक उसकी आँखों में आंसू आ गये। जाने क्यों ? जाने किस प्रकार ? और इससे पहले कि वह अपने आँसुओं को पोंछ डाले, उसने शीशे में देखा, रायसाहेब अन्दर आ रहे थे। वह कांप गई। इस समय ! रायसाहेब ? ? उनके आने का समय तो आधी रात है ? घबरा कर उसने पीछे देखा। रायसाहेब के पीछे-पीछे एक औरत भी अन्दर आ रही थी, जवान और खूबसूरत औरत, जिसके सिर पर सँवारे हुए वालों का गुच्छा भैंस की सींग के समान उठा हुआ था। कानों में सुन्दर बालियाँ—बड़ी-बड़ी, और मुखड़े पर पाउडर की सुखी इस प्रकार जैसे गेरू पोत रखा हो। होंठ यूँ सुख थे जैसे बिल्ली अभी-अभी अनगिनत चूहों का खून पीकर आई हो। आँखों से जलन और डाह की आग टपक रही थी जैसे वह तुरन्त ही उसे जलाकर वहीं राख कर देगी। उसके शरीर पर कटी आस्तीन का कसा ब्लाउज इतना चुसत और छोटा था कि उसका गोरा पेट सफेद-सफेद बादलों के समान झलक रहा था। उसकी नंगी-नंगी बांहें यूँ चमक रही थी जैसे काले बादलों में बिजली कौंद कर

ठहर गई हो। यह बिजली शायद उसके अरमानों के तहल पर हो गिर रही थी।

पारो ऊपर से नीचे तक कांप कर उठ खड़ी हो गई। गुनाल की नाजुक शाख के समान उसकी गर्दन झुक गई।

“यह कौन हैं मिस्टर राय?”

उस औरत ने पूछा, कुछ इस प्रकार जैसे दिल में धड़कती आग को छिपाने की कोशिश कर रही हो। पारो को शायद वह इस हवेली की एक आवश्यक हस्ती समझ बैठी थी।

परन्तु रायसाहेब ने कोई उत्तर नहीं दिया, वरन् आगे बढ़ कर वह उसके समीप आये। आंखों में खून छतर आया, शायद इस कारण कि पारो के झुकने पर मजर पड़ने से पहले उन्होंने वह सुहाग का सुख जोड़ा देख लिया था जो उनके प्यार की सब से बड़ी अमानत थी। पहली बार जो कमल लिया था वह सुहाग के इस सुख जोड़े की ही देन थी जिसमें उन्होंने अपनी पत्नी को देखा था। उन्होंने कुछ पूछा नहीं, कुछ कहा नहीं, कुछ देखा भी नहीं। उसकी आंखों में एक बार भी झांकने का प्रयत्न नहीं किया जहां निराशा में डूबी वर्षा नीले-नीले आकाश से उमड़ कर बाहर आने को मचल रही थी। उनका भारी हाथ एक बार हवा में लहराया और फिर इस प्रकार पारो के गाल पर पड़ा कि वह गिरते ही बेहोश हो गई।

“कौन है यह मिस्टर राय?” उत्साह पाते ही उसने फिर पूछा।

“मेरी नौकरानी...” उन्होंने गुस्से में कांपते हुए कहा—“मेरी कृपा का दुरुप्रयोग इस प्रकार करेगी, मैं कभी सोच भी नहीं सकता था। मेरी पत्नी का सुहाग जोड़ा पहन कर इसने अपवित्र कर दिया।”

“यह मजाल इस लड़की की? उस औरत ने आग पर तेल डाला—“इसे तुरन्त निकाल बाहर कीजिए। जरा मुझे इस घर में आने दीजिए, फिर यहां सबकी खबर लूंगी।

“हां प्रभा, अब तुम जल्द ही इस घर को संभाल लो” राय साहेब थके-थके-से-बोले—“मुझे अब यह अकेला जीवन बीतता दिखाई नहीं पड़ता।”

२० :: राख के फूल

“मैं कल ही मंगनी का प्रबन्ध करती हूँ। फिर इसी हफ्ते में हम शादी कर लेंगे।” अपने अन्दर की उठती खुशी को छिपाते हुए वह बोली—“यदि अब देर करूँगी तो इस हवेली के नौकर चाकर जाने क्या गुल खिला बैठें !”

“हां प्रभा...” राय साहेब कहते हुए कहीं एक सोफे पर बैठ गये। सिर पर हाथ रख कर सोचने लगे और हर सोच में उनकी सांसें गहरी ही होतौ गई। प्रभा आकर उनके समीप, बिल्कुल सटकर बैठ गई—गुमसुम, जैसे उनके गम में वह भी बराबर की सांभेदार थी।

पारो को होश आया तो अपने पैरों को समेटती हुई वह उठ खड़ी हुई। उसका शरीर एक शव के समान बेजान-सा था। आँखों में मोटे-मोटे आँसू यूँ आकर ठहरे हुए थे जैसे धूप में कमल पर पानी की मोटी-मोटी बूँदें छलक आई हों। राय साहेब देखते ही रह गये। जाने क्या सोच रहे थे ! इन आँसुओं में कितना दर्द था, कितनी चीख और पुकार थी, कितनी निराशा थी ! कमल जैसी यह आँखें ! वह मन ही मन तड़प कर रह गये। जीवन में पहली बार महसूस किया कि पारो भगवान की ऐसी कला है जिसे बनाते समय उसके हाथ काँप रहे होंगे, दिल धड़क रहा होगा, इसलिए कि मोम की इस गुड़िया में कहीं कोई कमी नहीं रह जाए।

परन्तु प्रभा की आँखों से अब तक शोलों की चिनगारी जारी थी। इन चिनगारियों में वह पारो के पूरे शरीर को जलाकर राख करने के लिए यूँ उतावली हो रही थी जैसे एक सर्प, नेवला देख कर मर-मिटने पर तैयार हो जाता है।

“यह सारे कपड़े और जेवर उतार कर तुम इसी समय यहाँ से निकल जाओ और फिर कभी इस हवेली का रास्ता मत देखना।” वह गरजते हुए बोली।

उसने कोई उत्तर नहीं दिया। राय साहेब भी कुछ नहीं बोले। चुपचाप वह दूसरे कमरे में चले गये तो प्रभा भी उनके पीछे-पीछे हो ली, यूँ कमर सटक कर मानो गुस्सा उसके शरीर पर चींटियों के समान रेंग रहा था।

— — —

राख के फूल :: २१

राजस्थान के एक भाग में छोटा-सा कस्बा है। इस कस्बे में कभी सूर्य नारायण सिंह की ज़मींदारी थी। वह छोटा-सा कस्बा तब किसी राज्य की राजधानी के समान खूबसूरत था। परन्तु भारत की स्वतन्त्रता के बाद अब यह उजड़ गया है। गांव-गांव सूखे पड़े हैं जैसे वर्षों से प्यासी धरती आकाश की और मुँह खोले प्यास से तड़प रही हो।

सूर्य नारायण सिंह को लोग अब भी राजा साहेब के नाम से पुकारते हैं। उनके मुखड़े की रौनक किसी राजा से कम नहीं थी। पहाड़ जैसा शरीर, साढ़े छः फुट ऊँचा, मोटी गर्दन, माथे पर सख्त खिचाव, सुर्ख-सुर्ख आँखें, खड़ी नाक और उसके नीचे बड़ी-बड़ी मूँछें राणा प्रताप के समान खड़ी-खड़ी, कि आदमी देखते ही काँप जाये। परन्तु अब उनकी हालत ऐसी थी जैसे कोई शेर पिंजरे में कैद होकर कई दिन से भूखा मर रहा हो। फिर भी उनकी अकड़ बही थी, वही आवाज और वही गरज, शरीर में वही गरम खून जो उन्हें अपने बाप-दादों से गुणों में मिला था। उनके पिता बहुत कट्टर थे। दादा इससे भी अधिक कट्टर कि जिस पर बुरी नजर पड़ जाये उसकी मौत ही आ जाये। अपनी दौलत का सहारा लेकर उन्होंने गांव की गरीब खूबसूरत लड़कियों की इज्जत जबरदस्ती सोने में तोल दी। यह शौक सूर्य नारायण सिंह में भी था। गराब और औरत—यही दो चीजें प्राप्त करने के लिए सूर्य नारायण सिंह ने अपनी दौलत का एक बड़ा भाग पानी के समान बहा दिया। इससे यदि भूले-भटके कभी फुसंत मिली तो वह शिकार खेलने निकल गए। शिकार में उन्हें केवल शेर का मुकाबला ही पसन्द था।

२२ : : राख के फूल

१५ अगस्त, १९४७ यदि करोड़ों इन्सानों की आजादी बन कर आई तो हजारों जानवरों की मौत बनकर भी । इन जानवरों में वह भी सम्मिलित थे । वह शान, वह दौलत, वह जायदाद, वह कस्बा, कस्बे के कोने-कोने में बनी हुई सफेद-सफेद बड़ी-बड़ी हवेलियाँ सब सरकार ने छीन कर गरीबों में बाँट दी । परन्तु फिर भी वह जनता के राजा साहेब ही बने रहे । आजादी के बाद भी लोग उन्हें झुक-झुक कर सलाम करते रहे । उनकी आज्ञा का पालन करने में अपना गर्व समझते रहे । दिलों पर छाया हुआ दौलत का डर अब भी उनके कानों में शेर के समान गरज रहा था ।

ले-दे कर अब उनके पास केवल एक हवेली ही रह गई थी जिसमें वह रह रहे थे । इतने अरसे में यदि और कोई जायदाद उनके पास बची थी तो समय के हालात ने उन्हें बेचने पर मजबूर कर दिया । जिस हवेली की चारदीवारी में कभी फूल महका करते थे, कभी क्यारियाँ लहलहाया करती थी, वहाँ अब कुछ भी नहीं था । समय की मजबूरियों ने आकर हवेली की सारी शान निगल ली थी । हवेली की मजबूत दीवारें वर्षों से भरस्मत को तरस रही थीं । चारदीवारी की दरारों में घास उग आई थी । सूर्य नारायण सिंह सब देखते और मन ही मन तड़प कर रह जाते । अपना समय याद करके उनकी आँखों में आँसू आ जाते । अपनी अवस्था का ज्ञान करके उनका जी चाहता कि उस बन्दूक से खुद को ही निशाना बना लें जिसके द्वारा अब तक जाने कितने गरीबों का खून होता आया है । उन पर इतना अधिक कर्ज हो चुका था कि कभी भी बाप-दादों की यह आखिरी निशानी, यह हवेली विक सकती थी । शायद इस संसार से अपना मुँह छिपाने के लिए वह ऐसा कर भी लेते, परन्तु एक मजबूरी थी उनके जीने की भी । वह जी रहे थे, ताकि अपने खून से जन्म दी हुई एक लड़की को पैरों पर खड़ा करके हाथ पीले कर दें । इसीलिए वह उसकी शादी के समय तक अपनी हवेली की शान बनाए रखने पर मजबूर थे । वह उनकी अपनी जान थी, उनकी आत्मा थी । लाड़ प्यार ने उसे इतनी स्वतन्त्रता दे रखी थी कि वह बुलबुल के समान गांव के खेतों में चहकती फिरती, पगड़ड़ियों राख के फूल : : २३

घर फुदकती फिरती, डोल-डोल उड़ती रहती। गांव के लोगों के दिलों में अब भी सूर्य नारायण सिंह की जमींदारी की छाप थी और इसीलिए कभी किसी ने उस पर आंख उठाने तक का साहस नहीं किया। सूर्य नारायण सिंह ने सैकड़ों जवान कुवारियों की मजदूरी से लाभ उठाया था, परन्तु अब जब उनकी बेटी जवान हो चली थी, वह अपने पाप का फल पाने से बहुत घबरा रहे थे। इसीलिए अपनी बेटी को इतना प्यार करने के पश्चात् भी उन्होंने उस पर प्रकट कर दिया था कि उसकी बदनामी उसकी मौत बन कर आयेगी। इस पाप को वह कभी क्षमा नहीं कर सकते जिसके कभी खुद अपराधी थे। प्रभा उसका नाम था जिसके पैदा होने के बाद ही से वह कर्ज के एक बोझ-तले दबते चले जा रहे थे और जैसे-जैसे वह बड़ी होती गई, यह बोझ और भी भारी होता गया। शुरू-शुरू में लड़की से काफी नफरत-सी थी, परन्तु जब एक दिन जमींदारी के छिन जाने के गम में उनकी पत्नी के दिल की धड़कन अचानक ही रुक गई तो प्रभा से यह नफरत अपने आप ही प्यार में बदल गई। प्रभा का निखार उभरते-उभरते तो उन्हें उससे उतना प्यार हो गया कि वह एक पल भी उसको देखे बिना नहीं रह पाते थे। प्रभा के हर निखार में उन्हें अपनी स्वर्गवासी पत्नी का रूप देखने का सुअवसर मिल रहा था।

घर का नौकर दीपक था। खानदानी नौकर, जिसके रंग-रंग में यहां का नमक भरा हुआ था, जिसकी सांसों में हवेली का वातावरण छाया हुआ था। जब तक उसका बाप जीवित रहा उसने कुछ भी काम नहीं किया। केवल खेला करता था, उछला और कूदा करता था। प्रभा के साथ बचपन ही से हर खेल में साथ देता रहता था, परन्तु इसके साथ जब वह पढ़ने चली जाती तो वह स्वयं भी एक किताब अलग लेकर बैठ जाता। विद्या प्राप्त करने की उसे बहुत इच्छा थी, परन्तु गरीबी ने उसका गला यूँ घोंट रखा था कि वह अपने दा यरे से बाहर निकलने का कभी साहस ही नहीं कर सका। बाप के मरने के बाद जब उसने नौकर होकर घोड़ा-गाड़ी की जिम्मेदारी संभाली तो आगे पढ़ने की इच्छाएं और भी समाप्त हो गईं। वह हवेली का एक कोचवान होकर रह गया।

२४ :: राख के फूल

एक घोड़े वाली वह बगधी चलाते समय उसका बाप गर्ब से सिर ऊँचा किये रहता था, आज संभालते हुए उसे शर्म आ रही थी। वह सफेद पट्टा घोड़ा जो कभी भूम-भूम कर चला करता था, आज हलाल का शिकार बना बिल्कुल मरियल, बूढ़ा और कमजोर-सा हो रहा था। परन्तु सूर्य नारायण के समान उसकी भी चाल में वही पुरानी अकड़ थी, हिनहिनाहट में जोशीले कहकहे थे। एक ही आवाज पर वह दाना छोड़ कर सूर्य नारायण के कदमों में आ जाता था। शायद उसे अपने मालिक की मजदूरियों का पूरा-पूरा ज्ञान था। सूर्य नारायण उसकी गर्दन पर हाथ फेरते तो उनकी आँखों में आँसू छलक आते।

प्रभा के मैट्रिक पास करते ही सूर्य नारायण ने उसे शहर के एक कालेज में प्रवेश दिला दिया। दीपक हर सुबह और हर शाम बगधी द्वारा खुद ही प्रभा को ले जाता और ले आता। यही अब उसका एक काम रह गया था। ऊपर की छत गिराकर प्रभा शहर की सारी रंगी-नियाँ देखती हुई कालेज जाती और इसी प्रकार वापिस भी आती। रास्ते भर वह दीपक से बातें करती जाती। छेड़-छाड़ कर उसका मजाक उड़ाती। उसकी मजदूर जवानी से आनन्द उठाती। उसे एक अजीब ही मजा मिलता। वह जानती थी दीपक से वह बचपन ही से खुल कर बातें करती आई है। वह उसके लिए होश संभालते संभालते ही तड़पने लगा है। उसे खामोश नजरों से देख कर वह दिल ही दिल में उसके प्यार का बंदी है। वह दीपक को नौकरों के पलड़े में तोलने के बजाय उसका भार जवानी की दृष्टि में देखती। वह यह देखना चाहती थी कि उसकी सुन्दरता एक आशिक को कहाँ से कहाँ तक पहुँचा सकती है। दीपक को दीवाना और पागल बनाकर वह इस बात का अनुभव करना चाहती थी कि उसकी सुन्दरता पर कोई कहाँ तक मुग्ध हो सकता है। एक अनुमान लगाना चाहती थी—उस काम के अंजाम का जिसे पूरा करने के लिए वह वर्षों से एक सपना देख रही थी। उसे अपनी सुन्दरता पर विश्वास था—सुन्दरता से अधिक उसे अपने ऊपर गर्व था। यह जादू भरी जवानी, यह खुमार, यह अदायें, यह बाँकपन..... किसको दीवाना नहीं कर सकता है? उसके बाल लम्बे और भूरे-भूरे
राख के फूल :: २१

थे । बड़ी-बड़ी आँखें भी भूरी-भूरी थीं, बिल्कुल शराब के भरे प्यालों के समान, बाप का शराबी रक्त जो उसकी रगों में दौड़ रहा था । दूध के समान सफेद रंग था उसका, परन्तु मुखड़े पर कोमलता से अधिक सुन्दरता झमकती थी । चाल में नजाकत से अधिक अकड़ और गर्व था । उसने कभी सिर झुका कर चलना नहीं सीखा था । अपने पिता के समान ही उसका दिल व दिमाग भी सख्त था । बात-बात में जब कभी दीपक उससे नजर मिलाकर अपनी गरीबी को याद करते ही आँखें नीची कर लेता तो वह खुशी में फूली नहीं समाती । अभी तो उसे ऐसे ही कत्ल, जाने कितने और करने थे । संसार को अपने ऊपर दीवाना करने में जौ बड़प्पन एक लड़की को मिल सकता है, शायद वह किसी और बात में नहीं मिल सकता । राह चलते-चलते वह दीपक की दीवानगी पर इतनी जोर से हँसती कि आस-पास के यात्री उसे पलट कर देखने लगते ।

“इतना हँसना अच्छा नहीं होता छोटी सरकार ।”

एक दिन उसने कहा ।

“क्यों नहीं होता ?” प्रभा तेजी से बोली—“मेरी खुशी तुम्हें पसन्द नहीं क्या ?”

“यह बात नहीं छोटी सरकार,” वह बोला—“मेरा मतलब किसी का मजाक उड़ाकर हँसना अच्छा नहीं ।”

“और यदि कोई इस योग्य ही हो तो ?”

“तो एक दिन आप भी उसके आगे मजाक का कारण बन सकती हैं ।”

“शट-अप !” प्रभा चीख पड़ी ।

परन्तु कुछ देर बाद दोनों फिर एक दूसरे से बातें करने लगे जैसे कुछ हुआ ही नहीं । उसकी बातों का दीपक गम्भीर अर्थ निकालने के बजाये उसे क्षमा कर देता । उसे मालूम था, वह प्रभा के योग्य जरा भी नहीं । वह उसे कभी नहीं जीत सकता । प्रभा यह कभी नहीं भूल सकती कि उसके बीच गरीबी और अमीरी, मालिक और नौकर, पढ़ाई और जाहिली, जात और पात की एक ऐसी दीवार है जो कभी नहीं

टूट सकती और इसलिए वह प्रेम का चाहते हुए भी अपने दिलसे उठते धुएं को छिपाने की कोशिश करता रहा ताकि उसके पागलपन को जान कर वह उसका मजाक न बनाये। परन्तु फिर भी प्रभा उसके दिल की गहराई में छिपी ठंडी-ठंडी आग की आंच जाने कैसे महसूस कर लेती थी ? शायद इसलिए कि उसकी सुन्दरता असीम थी। ऐसा ही उसे विश्वास होगा।

समय दीपक की वगधी के पहियों की गति से भी तेज बीतता गया। जवानी जिन्दगी के ऐसे मोड़ पर आकर ठहर गई जहां खूबसूरती थी, उमंगें थीं, चाह थी। दीपक के मुखड़े तथा उसके शरीर से जवानों की चमक-दमक फूट-फूट कर बाहर आ जाना चाहती थी, परन्तु शरीर ने उसकी इस सुन्दरता पर इतना मोटा लवादा ओढ़ रखा था कि उसने कभी इसे उतार कर अपनी सच्चाई जानने का प्रयत्न ही नहीं किया। परन्तु प्रभा कली से अब एक बहार का खूबसूरत फूल बन कर देखने वालों के दिल व दिमाग के वातावरण में महक उठी, पूरे सुरूर और नशे के साथ। जब वह कली थी, एक छोटी-सी कली और जब वचपन में एक फिल्म देख कर उसे भी आने वाली जिन्दगी की मांग का ज्ञान हो गया था, तब ही जवानी ने चुपके से आकर उसके दिल पर एक हल्की-सी दस्तक दी थी। उसी दिन उसने प्रण कर लिया था कि वह भी पर्दे पर चलती-फिरती एक सुन्दरी बनेगी जिसे देखते ही लोग ठंडी आहें भरने लगते हैं। यही कारण था कि वचपन ही से वह अपने घर में छुप-छुप कर अभिनय का अभ्यास करती रही। यह शौक उसके दिल व दिमाग पर इतनी अधिकता से छा गया था कि वह सोते-सोते ही सपना देखती रही। बड़े-बड़े सिनेमा-घर, बड़े-बड़े पोस्टर्स बड़ी-बड़ी तस्वीरें.....इन तस्वीरों में केवल उसका अपना ही रूप होता। लोगों की भीड़ इतनी है की टिकटें ब्लैक में बिक रही हैं। एक फिल्म की सफलता ही अदाकार की सबसे बड़ी खुशी है।

बी० ए० की परीक्षा होने ही वाली थी कि एक दिन उसे पता चला, बम्बई से कोई फिल्म कम्पनी उसके शहर में शूटिंग के लिये आई हुई है। उसके दिल में एक इच्छा-सी जागी। उसका मन तड़प उठा

राख के फूल :: २०

कि वहां जाकर वह लोगों से मिले, परन्तु वहां जाने के लिए दीपक का साथ आवश्यक था—वैसे भी दीपक को उसने पहले से मिला रखा था। उसे विश्वास था—उसे खामोश रखने के लिए उसकी प्यार-भरी एक मुस्कुराहट ही बहुत है।

उस रात वह बिल्कुल नहीं सो सकी। सारे समय आने वाले दिन का इन्तजार करती हुई वह तरह-तरह के सपने बनाती रही। कालेज जाने के लिए वह साधारण साढ़ी पहनेगी। परन्तु साथ में छिपा कर वह दूसरी सुख रेशमी साढ़ी भी ले जायेगी। वैसा ही ब्लाऊज होगा। गले में चमकते हुए जेवर, बालियां। पुस्तकों के स्थान पर थोड़ा मेक-अप का भी समान।

रात यूँ कटी मानो पहाड़ टल रहा था। हर पल एक-एक वर्ष के समान बीता।

दूसरे दिन समय से पहले ही वह कालेज के लिए तैयार खड़ी थी। दीपक जब बग्गी लेकर अपने निश्चित समय पर आया तो उसको सख्त क्रोध आया। उसका जी चाहा उसे डांट दे। इतनी देर क्यों लगा दी? परन्तु दिल की भावना छिपा कर वह दीपक को देखते ही मुस्कुरा पड़ी। दीपक के दिल में खुशी के बजाये आश्चर्य की लहर दौड़ गई। आज यह पश्चिम से सूर्य कैसे निकला? आवश्यक कोई भेद है।

रास्ते भर वह खामोश रही। अपने सपनों की ताबीर देखती रही। रह-रह कर मुस्कुरा पड़ती जैसे अपने आप से बात कर रही हो। कालेज पहुंचते ही उसने उतर कर कहा—“तुम ठहरो, मैं अभी आती हूं। वापस मत चले जाना।”

और जब वह चन्द भिन्टों में वापस आई तो दीपक उसे देखता ही रह गया, बहुत आश्चर्य से, और इससे पहले कि वह कुछ पूछे, प्रभा उच्चक कर बग्गी पर सवार हो गई।

“आज कालेज बन्द है।” प्रभा ने अपने आप ही कहा—“सारी लड़कियां शूटिंग देखने गई हैं। हम भी वहीं चलेंगे।”

“लेकिन...”

“चलो—” प्रभा सख्ती से चीखी।

२८ : : राख के फूल

दीपक ने खामोशी से सिर झुका लिया । रास्ते भर दोनों ने एक दूसरे से बात नहीं की ।

जवान लड़के-लड़कियों की भीड़ यूँ लगी हुई थी मानो यहां कोई मेला हो रहा हो । बड़े-बड़े कैमरे, कैमरों के सामने कुछ बनावटी, कुछ प्राकृतिक चीजें । एक ओर हीरोइन आराम कुर्सी पर बैठी हुई थी । एक लड़की उसे पंखा झल झल कर उसके भाग्य पर डाह कर रही थी । हीरो डाइरेक्टर से बातें करने में मगन था । कैमरामैन दृष्टि-कोण बना रहे थे । जवान लड़के-लड़कियाँ हीरो हीरोइन से दो शब्द प्राप्त करने के लिए उतावले हुए जा रहे थे । प्रभा ने देखा, हीरोइन के स्थान पर वह स्वयं बैठी हुई है । लोग उस पर टूटे पड़ रहे हैं । परन्तु वह अपने हाथों से अपनी तीखी पलको को तलवार के समान नोकीली बना कर कत्ल का सामान आसान कर रही है । होठों की सुर्खी और गालों की लाली तेज कर रही है । फिर कैमरा फिट हुआ, फिल्म लेने का कोण ठीक हुआ । वह उठी और इठलाती बल खाती कैमरे के सामने आ खड़ी हुई । शाम होने से पहले बदली छा गई । मुखड़े पर रोशनी बराबर नहीं पड़ सकी इसलिए शूटिंग थोड़े समय के लिए रोक दी गई । वह उसी प्रकार इठलाती-बल खाती फिर अपने स्थान पर आकर बैठ गई । पुलिस इन्स्पेक्टर खास तौर पर उसकी रक्षा कर रहा है, फिर भी लोग उस पर टूटे पड़ रहे हैं । यहां की भीड़ से बचने के लिए वह परेशान है । मक्कारी करते हुए पसीना पोंछ रही है जैसे बहुत थक गई हो । इस भीड़ में उसका दम घुट रहा है । वह यहां से भाग जाना चाहती है ।

अचानक वह चौंक पड़ी ।

“आप इस फिल्म में एक्स्ट्रा का काम कीजियेगा ?

प्रभा ने देखा उसके सामने एक कैमरामैन खड़ा है । उसी से वह पूछ रहा था । उसका सपना टूट गया । वह अपने ही स्थान पर खड़ी थी । आश्चर्य से उसे देखने लगी ।

“मैं आपसे कह रहा हूँ ।” उसने फिर कहा ।

“जी...मैं...?” प्रभा घबरा गई ।

राख के फूल : : २६

इमें इस फिल्म में एक एक्स्ट्रा लड़की की आवश्यकता है । आप हमारी फिल्म में काम करना पसन्द कीजियेगा ? आपको दो सौ रुपये तक मिल जायेंगे ।”

“दो सौ रुपये, केवल छोटे से रोल के लिए !” उसने आश्चर्य से पूछा ।

“हां हां, क्यों नहीं !” उसने विश्वास दिलाया ।

“कर तो लूँ...” प्रभा थोड़ा हिचकिचाई ।

“देखिए यदि आपको काम करना हो तो साफ कहिए वरना हम दूसरा प्रबन्ध करें ।” वह जाने के लिए पलटा ।

“नहीं-नहीं ठहरिए । मैं चल रही हूँ । वह झट बोली । ऐसा न हो कि यह हाथ आया सुनहरा अवसर छिन जाये । आखिर धीरे-धीरे इसी प्रकार तो वह सफलता की सीढ़ियां तय करेगी । अपने सपनों को सत्य बनाने के लिए इसके बाद फिर कभी अवसर मिले या नहीं मिले ?

“आप बहुत सुन्दर हैं —” कैमरामैन ने उसे ऊपर से नीचे तक ललचाई दृष्टि से देखा, “आप चाहें तो थोड़ी सी मेहनत द्वारा ही भारतवर्ष की एक श्रेष्ठ अभिनेत्री बन सकती हैं ।”

प्रभा फूली नहीं समाई । लड़कियों को अपनी प्रशंसा का विश्वास तरन्त ही हो जाता है । प्रभा के दिल में जो संकोच शेष था, वह भी मिट गया ।

“शूटिंग के बाद मेरा पता ले लीजिएगा । कभी बम्बई आना हो तो फिल्मी संसार में स्थान ढूँढ़ने से पहले मुझसे मिलिएगा । मैं कभी आपको निराश नहीं करूँगा ।” कैमरामैन ने फिर कहा ।

प्रभा के लिए खुशी के मारे धरती पर से पग उठाना कठिन हो गया । इतनी जल्दी.....इतनी जल्दी उसके सपने सत्य हो जायेंगे, वह कभी सोच भी नहीं सकती थी ! कितनी आसानी से सब कुछ होता जा रहा है, अपने आप ही ! अपने भाग्य पर उसे गर्व हो गया ।

अपने मन में उठते खुशी के ज्वार-भाटा को छिपाकर उसने कैमरामैन को देखा, इस प्रकार जैसे उसकी कृतज्ञ हो । कंजी-कंजी

६० :: राख के फूल

आंखों वाला वह एक काला-सा आदमी था, दुबला-पतला, जिसके सिर का गंजापन उसके कैमरा के शीशे के समान चमक रहा था। वह बहुत हसरत से उसे निहार रहा था। कंजी-कंजी आंखों में बिल्ले की सी चमक देखकर जाने क्यों उसका दिल एक बार कांप उठा। उसकी बातों पर विश्वास करते-करते उसका दिल बुरी तरह धड़कने लगा। उसका जी चाहा वह अपने सपनों के महल को गिराकर चकनाचूर कर दे। यहां से भाग जाये। फिर कभी इधर का विचार तक नहीं करे। परन्तु फिर वह संभल गई। वह एक पढ़ी-लिखी लड़की है। उसका शरीर राजस्थान की मिट्टी से बना हुआ है। उसकी रंगों में जमींदार सूर्य नारायण का रक्त है। वह कभी किसी की मजबूरी का शिकार नहीं बन सकती। किसी के आगे नहीं झुकेगी, चाहे जान ही क्यों न चली जाये। वह अपनी इज्जत को बचाते हुए बड़ी चतुरता से इस सफलता को प्राप्त करेगी। वह संसार को दिखा देगी कि यदि औरत चाहे तो वह कभी मर्द के हाथ का खिलौना नहीं बन सकती। अपने पग उसने आगे बढ़ा दिये।

“छोटी सरकार...” अचानक दीपक उसके सामने आ पहुंचा, “कहां जा रही हैं?”

“देख लो।” प्रभा ने लापरवाही से उत्तर दिया।

“नहीं, मैं आपको हरगिज ऐसे काम में सम्मिलित नहीं होने दूंगा।” दीपक ने उसका रास्ता रोक लिया।

“तुम कौन होते हो मूझे रोकने वाले ? हटो मेरे सामने से।” गुस्से में वह खुद ही उसकी बगल से होकर आगे बढ़ गई।

“लेकिन...”

लेकिन प्रभा तब तक बहुत आगे बढ़ चुकी थी, ऐसे स्थान पर जहां पुलिस ने साधारण जनता को जाने से रोक रखा था।

दीपक वहीं पर सिर झुका कर खड़ा हो गया। सोच रहा था राजा साहेब को क्या मुंह दिखाएगा? क्या कहेगा उनसे? आखिर वह प्रभा के साथ उसे क्यों भेजते हैं? एक बार उसका मन किया कि तुरन्त ही जाकर वह उन्हें सब कुछ बता दे। उन्हें अपने साथ ले आये।

राख के फूल :: ३१

परन्तु फिर प्रभा का बड़ा हुआ भयानक कदम देखकर वह चुप हो गया। वह तेज मिजाज की पत्थर-दिल लड़की इस समय अपने पिता का भी विचार नहीं करेगी। उनसे लड़कर सब के सामने ही उनका अपमान कर बैठेगी। फिर राजा साहेब जाने क्या कर बैठे। शायद सबके सामने ही वह उसका गला घोट डालें। प्रभा से कहीं अधिक उनका रक्त गर्म है। उसने चुप्पी साध ली। सोच लिया कि वह वापस जाते ही राजा साहेब से सब कुछ कह डालेगा। घर की चारदीवारी में जो भी हो वह ठीक है परन्तु इस प्रकार से घर की इज्जत लुटाना अच्छी बात नहीं। फिर राजा साहेब स्वयं ही प्रभा का रोल फिल्म से निकलवाने का प्रबन्ध कर लेंगे।

दीपक देख रहा था, प्रभा किसी कागज पर दस्तखत कर रही है। शायद फिल्म का एग्जीमेंट था। वह बालिग थी इसलिए अपना भविष्य बनाने का उसे पूरा-पूरा अधिकार था। वह खून का घूंट पीकर रह गया। क्या हुआ यदि वह उसके योग्य नहीं है; परन्तु कोई दूसरा तो आखिर उससे व्याह करेगा ही। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो प्रभा अपने खानदान पर नहीं, उसके माथे पर कलंक लगा रही है। वह मन-ही-मन तड़प कर रह गया। उसका जी चाहता था, प्रभा का वह खून कर दे। मुंह नोच कर यूँ बिगाड़ दे कि उसका सारा गर्व समाप्त हो जाये। परन्तु अपनी हैसियत? अपना अधिकार? वह चुप हो गया। खामोशी से उसने दिल पर सब्र का पत्थर रख लिया और अपनी आँखों के सामने दिल की दुनिया लुटता देखता रहा। प्रभा एक तितली के समान इधर-उधर फुदक कर हीरो के गले में बाँहें डाल रही थी ताकि हीरोइन देख देख कर डाह की आग में जले। उसे नहीं मालूम था, उसका यह अभिनय दीपक को वास्तविक रूप में जलाकर राख किये अपने शरीर के अंग का प्रदर्शन करके शायद उसने हीरो के दिल में भी थोड़ी जगह प्राप्त कर ली थी। जब ही वह उसे ऐसी नजरों से देख रहा था जिसमें बनावट नाम मात्र भी नहीं थी। काफी स्वाभाविकता थी उसके देखने के ढंग में कि दीपक तड़प-तड़प कर रह गया।

और जब प्रोड्यूसर ने शूटिंग के बाद उसकी अँगुलियों को दबाकर

३२ :: राख के फूल

दो सौ सौ के नोट दिये तो उसे ऐसा महसूस हुआ मानो सारा संसार उसकी मुठ्ठी में आ गया है। उसके सपनों की ताबीर कितनी सुहानी थी ! उसके कदम धरती पर नहीं पड़ रहे थे।

प्रभा जब वापस आई तो दीपक पहले ही से हाथ में लगाम लिये बगधी पर बैठा हुआ था। उसके सवार होते ही उसने गाड़ी हाँक दी। रास्ते भर प्रभा बगधी में यूँ भूमती रही जैसे आकाश के बादलों में पालकी पर यात्रा कर रही हो। चलते-चलते कितनी ही नजरों ने उसे हर्षपूर्वक देखा था। लगातार उसे लोग देखते ही जा रहे थे। प्रभा का सिर गर्व से ऊँचा हो गया। अभी क्या है ? जरा भारतवर्ष की सब से बड़ी हीरोइन बन जाऊँ फिर दिखाऊँगी इन दीवानों को वह सोच रही थी। परन्तु दीपक अर्म से धरती में गड़ा जा रहा था। उसे हर नजर के पीछे एक ठहाका सुनाई पड़ता। लोग उसका मजाक उड़ा रहे हैं। लोग प्रभा की हँसी उड़ा रहे हैं। लोग सूर्य नारायण सिंह के मुँह पर थूक रहे हैं—हा हा हा हा.....हा हा हा हा।

“घर पर यह बात किसी को नहीं मालम होनी चाहिए।” रास्ते में प्रभा ने आज्ञा दी।

“आज नहीं तो कल यह बात प्रकट होकर ही रहेगी।” दीपक लापरवाही से बोला।

“कल अभी बहुत दूर है।” प्रभा बहुत विश्वास से बोली—“जब तक यह फिल्म पर्दे पर आयेगी, मैं इस देश की एक महान अभिनेत्री बन चुकी हूँगी।”

“मैं समझा नहीं.....”

“तुम्हें समझने की आवश्यकता भी नहीं। बस अपने काम से काम रखो।”

“परन्तु यह बात मैं हरगिज नहीं छिपा सकता।” दीपक ने साफ शब्दों में उत्तर दिया—“मैं तो यह बात राजा साहेब को आज ही बताकर रहूँगा।”

“चुप रहो” प्रभा कड़क कर बोली—“मेरे नौकर होकर मेरी ही आज्ञा ठुकराते हो ?”

३३ :: राख के फूल

“नौकर मैं आपके पिता का हूँ, आपका नहीं, वर्ना आपके साथ वह मुझे क्यों भेजते ? आपका नौकर होता तो यह सब देखने की नौबत ही नहीं आती । ऐसी जगह भला आप मुझे फिर क्यों लातीं ?”

प्रभा बल खाकर रह गई । परन्तु फिर अपने क्रोध पर काबू पाते हुए उसने नम्रता से काम लिया । जहाँ नफरत साथ नहीं देती वहाँ प्यार से काम लेना आवश्यक है । बग्गी एक पार्क के सामने से होकर जा रही थी । हल्की-हल्की हवा चल रही थी । बदली का समां था । आस-पास लोग भी कम ही दिखाई पड़ते थे । वैसे भी यह घूमने-फिरने का समय नहीं था इसलिए रास्ता साफ था । प्रभा ने एक किनारे बग्गी रुकवाई जहाँ सड़क के किनारे, पार्क के कोने में, केवल एक ही रेस्टोरैन्ट था । अपने आप ही वह नीचे उतर कर खड़ी हो गई । दीपक वहीं बैठा रहा ।

“मेरे साथ नहीं आओगे ?” प्रभा ने पहली बार बहुत प्यार से कहा ।

दीपक को विश्वास ही नहीं हुआ । यह बहता पानी कहाँ स्थिर हो गया ? अवश्य ही कोई गड़ढा है । वह खामोशी से उसके साथ हो लिया प्रभा उसे रेस्टोरैन्ट के अन्दर एक किनारे केबिन में ले गई । पर्दा गिरा कर वह बैठ गई ।

“बैठो दीपक ।”

और वह बैठ गया, बिल्कुल उसके समीप ।

वेटर आया तो प्रभा ने आर्डर देकर सन्तोष की साँस ली । कुछ देर सोचती रही कि किस प्रकार बात आरम्भ करे ! दीपक खामोशी से सिर झुकाये अपनी अँगुलियों से मेज पर हल्की-हल्की थपकी देता रहा ।

“दीपक.....” आखिर प्रभा ने ही खामोशी तोड़ी ।

दीपक ने नज़रें ऊपर की ।

“तुम सचमुच मुझे प्यार करते हो न ?”

दीपक फिर भी कुछ नहीं बोला । उसके इस अनोखे प्रश्न पर वह चकित था, परन्तु उसने अपने मूखड़े के भाव को छिपा लिया ।

“आज मैं तुम्हारे प्यार की कीमत देने को तैयार हूँ परन्तु..... एक शर्त पर...” प्रभा ने गहरी साँस को रोकते हुए कहा, “तुम उस

३४ : : राख के फूल

समय तक अपनी ज़वान बन्द रखोगे जब तक मैं यहाँ से चली नहीं जाऊँ ।”

दीपक फिर भी खामोश रहा ।

“मैंने निश्चय कर लिया है, मैं यहाँ से अब शीघ्र ही चली जाऊँगी । प्रोड्यूसर और कैमरामैन ने मुझे मेरी सफलता का विश्वास दिलाया है ।”

“छोटी सरकार.....” दीपक ने दुखी दिल से कहा—“आप नहीं जानतीं, यह लोग कैसे होते हैं । शरीफ लड़कियों के लिए यह जगह अच्छी नहीं । भला सोचिए उस समय क्या होगा जब आपके पिता जी आपको पर्दे पर दूसरों की बाहों में खुली तरह उछलते-कूदते और लिप देखेंगे ! वह आपको कितना अधिक प्यार करते हैं !”

“धवराओ नहीं दीपक, मैं ऐसा कोई रोल नहीं ग्रहण करूँगी जिससे मेरे खानदान की इज्जत को बट्टा लगे ।” प्रभा ने पूरे विश्वास से कहा ।

“आप इन्हें कहीं जानती छोटी सरकार...” दीपक ने फिर उसे समझाया, “यह आपका कठपुतली के समान नचा कर संसार के सामने नंगा कर देंगे । आपको ऐसी राह पर लाकर छोड़ देंगे जहाँ से आप न आगे बढ़ सकेंगी और न लौट कर वापस ही आने को मिलेगा ।”

“नहीं, ऐसी बात नहीं है । आखिर वह भी तो लड़कियाँ ही हैं जो इस समय फिल्मों में काम कर रही हैं । तरक्की करना मनुष्य की मेहनत पर निर्भर है । मैं जानती हूँ मुझमें क्या आकर्षण है ।”

“आप निश्चय ही खूबसूरत हैं...बहुत खूबसूरत, परन्तु फिल्मी संसार के लिए इतना ही काफी नहीं ।”

“मैं सब सीख लूँगी । प्रभा बोली—“पैदा होते ही तो कोई सब गुण लेकर आता नहीं ।”

“परन्तु...”

“मुझे बहलाने का प्रयत्न मत करो ।” प्रभा खिसियानी-सी होकर बोली—“जो कह रही हूँ उसे सुनो ।”

दीपक खामोश हो गया ।

वेटर काफी रोककर बैठा गया तो प्रभा ने उठकर कबिन का पर्दा ठीक किया और फिर अपनी जगह बैठ गई।

“तुम मुझे प्यार करते हो न ?” उसने फिर पूछा।

दीपक फिर भी खामोश रहा। अपनी आँखें नीची कर लीं।

“अपने होठों पर ताला लगाये रखने के लिए तुम जो भी कीमत चाहो, मुझसे ले सकते हो।” प्रभा कहती ही गई।

“जो भी माँग लूँ ?” उसका दिल धड़क उठा।

“हाँ, रुपया, पैसा, यह जेवर जो मेरे पास हैं।”

“बस.....?”

“इन होठों को आज तक किसी ने नहीं छुआ। तुम चाहो तो इनका भी कुँवारापन छीन सकते हो।” प्रभा ने एक ही साँस में कहा।

दीपक समझ गया प्रभा अब इतना आगे बढ़ चुकी है कि उसके लिए पीछे हटना असम्भव है। आज उसकी जवान बन्द रखने के लिए वह अपने होठ अर्पण कर रही हैं तो कल इससे भी आगे बढ़ सकती है। उसे नहीं मालूम था, फिल्मी संसार की चमक में इतना अधिक आकर्षण है। प्रभा से उसे नफरत सी हो गई। उस पर अफसोस भी हुआ कि वह उस राह पर भटक जाना चाहती है जिसकी कोई मंजिल नहीं, कोई ठिकाना नहीं। अपना सब कुछ चार ही दिन की जगमगाती शान व शौकन के पीछे वह त्याग देना चाहती है जिसे प्राप्त करने के लिए अभी वह कई कदम पीछे खड़ी थी।

“मैं अपनी जवान बन्द रखूँगा.....।”

दीपक कहता हुआ उठ खड़ा हुआ।

प्रभा ने देखा उसकी आँखों में बादलों का ढेर है। शायद बरस जाने को उतावले हो रहे थे। वह कुछ समझी भी। उसके सीने में दीपक का दिल एक दर्द बनकर उभरा भी। परन्तु आने वाले जीवन की आशायों की चमक ने इसे यूँ मद्धिम कर दिया कि वह महसूस ही नहीं कर सकी। दीपक के समान वह भी काफी बिना पिये ही उठ गई।

हवेली में गाड़ी पहुँची तो प्रभा लपक कर अपने कमरे में चली

३६ :: राख के फल

गई। इतनी स्फूर्ति उसमें पहले कभी नहीं थी। वह उछलती-कूदती बूँ चल रही थी मानो अब भी बादलों की सवारी कर रही हो। वह बहुत खुश थी, बहुत अधिक, जैसे सारा संसार उसके कदमों में आ बिछा हो। परन्तु दीपक खामोशी से गाड़ी को एक जगह लगाकर धोड़ा अस्तबल में ले आया। उसे बाँध कर चारा देने के बाद वह अपनी कोठरी में जाकर पड़ रहा। बहुत देर तक वह अपने आप से लड़ता रहा। उसके दिल में एक युद्ध मचा हुआ था—वचन और फर्ज का। उसने इस धर का नमक खाया है। यहाँ के वातावरण में साँसें ली हैं। एक अच्छे फूल के समान यहाँ की टहनियों में खिला है। फिर वह खुद ही जहर बन कर किस प्रकार इस हरे-भरे बाग को उजड़ जाने दे? परन्तु प्रभा को दिया हुआ वचन? ऊँह ! ऐसा वचन भी किस काम का जिसको निभाने में एक जीवन ही नष्ट हो जाये, एक खानदान मिट जाये, एक संसार तबाह हो जाये। मानवता ने उसके सारे विचारों को आ घेरा। उसने तय कर लिया, वह प्रभा को इस खानदान के मिटने का कारण कभी नहीं बनने देगा।

उस दिन सूर्यनारायण सिंह बहुत देर में आये। शायद शतरंज की वाजी कठिन पड़ गई होगी। जमींदारी समाप्त होने के बाद यही एक सस्ता खेल उन्हें भाया था। रात लगभग आधी बीत चुकी थी। हाथ से छड़ी टेक-टेक कर वह शाहाना चाल चल रहे थे।

“दीपक ने उन्हें हवेली के बाहरी गेट पर ही जा लिया।

“कहो दीपक, क्या बात है?”

“यदि आप मेरी कोठरी में चल सकें तो कृपा होगी। आपसे कुछ कहना चाहता हूँ। बहुत ही आवश्यक बात।”

उनकी भवें तन गईं। समय को नाजुक समझ कर वह उसके साथ हो लिये। अपनी कोठरी में ले जाकर उसने उन्हें एक लोहे की कुर्सी पर बैठाया और स्वयं सामने खड़ा रहा। बहुत कठिनाई से उसने बात आरम्भ की और एक ही साँस में सब कुछ यूँ कह गया जैसे पहले से ही रट रखा हो। उसके मुँह से निकलते एक-एक शब्द के साथ जमींदार साहेब का रंग और भी गहरा होता गया। और जब उसने बात समाप्त

राख के फूल : ३७

की तो वह बुरी तरह काँप रहे थे। आँखों से शोले बरस रहे थे और हाँटों को उन्होंने यूँ भींच रखा था मानो गुस्से की आग को अन्दर ही अन्दर रोकने का प्रयत्न कर रहे हों। छड़ी को अंगुलियों से इस सख्ती के साथ वह पकड़े थे जैसे किसी बन्दूक की नली हो और अभी-अभी वह उठते ही अपनी बेटी का खून कर डालेंगे।

“अगर मैं खामोशी से हाँ में हाँ नहीं मिलाता तो छोटी सरकार उधर ही उधर से भाग जाती।”

दीपक ने अपने बचाव में सफाई पेश की। उनके बढ़ते हुए गुस्से से वह खुद भी डर गया था।

जमींदार साहेब बिना कुछ कहे उठ खड़े हुए। गर्दन को एक झटका देकर वह बाहर निकले, इस अकड़ के साथ जैसे उनकी जवानी फिर लौट आई हो। दीपक भी उनके पीछे-पीछे हो लिया। गोल कमरे से होकर वह अपने कमरे में पहुँचे। दीवार पर लटकी बन्दूक को उन्होंने एक ही झटके में उतारा तो दीपक काँप गया। उसे विश्वास था कि प्रभा उनकी एक ही बेटी है, आत्मा से भी अधिक प्यारी है, वह उसे नहीं मार सकते। परन्तु अब वह पछता रहा था। उनका गुस्सा देख कर प्रभा के बचने की उसने सारी आशायें छोड़ दीं। इससे पहले कि वह कुछ और सोचे, जमींदार प्रभा के कमरे में पहुँच चुके थे।

प्रभा वहाँ नहीं थी। शायद उसे दीपक के वचन पर सन्देह था इसलिए उसने जीती हुई बाजी पर एक और दाँव लगाना उचित नहीं समझा होगा।

दीपक ने घड़ी देखी। रात के लगभग बारह बज रहे थे। बम्बई जाने वाली आखिरी ट्रेन जनता एक्सप्रेस तो घंटों पहले छूट चुकी थी। उसने प्रण कर लिया वह जैसे भी हो, बम्बई से उसे वापस लेकर आयेगा। तब तक राजा साहेब का गुस्सा भी शान्त हो जाएगा। शायद एक बाप के नाते वह उसे क्षमा कर दें। उन्होंने भी अपने जीवन के सैकड़ों लड़कियों को अपनी रातों का खिलौना बनाया था। शायद भगवान इसीलिए उनके पापों का कर्ज उनकी बेटी द्वारा चुका रहा है। शायद यही समझ कर वह अपनी बेटी को क्षमा कर दें। उसके आते ही

जल्द ही उसका दामन किसी से बाँध कर अपना इज्जत की सरक्षा कर सकते हैं !

○

गोदहा जंकशन पर गाड़ी रुकी और प्रभा अपनी परेशान आत्मा की प्यास बुझाने के लिए प्लेटफार्म पर उतर कर आये बड़ी ही थी कि तभी उसे किसी ने पुकारा—

“प्रभा देवी.....”

वह चौंक पड़ी ! परदेस में उसे कौन जानता है ? घबरा कर उसने पीछे देखा !

वही कैमरा मैन जिसकी तस्वीरों में वह कैद हीकर रह गई थी, उसकी ओर बढ़ा चला आ रहा था !

“आप ! यहाँ ! !” उसने आते ही आश्चर्य से पूछा !

“जी हाँ...” प्रभा ने उत्तर दिया, “आप ने कहा था न कि...”

“हाँ...आँ...लेकिन...” ।

“मैंने अपना घर सदा के लिए छोड़ दिया है।”

“प्रभा देवी...” उसकी हालत का अनुमान लगाते हुए उसने कहा, “किसी पर इतनी जल्दी विश्वास कर लेना अक्लमन्दी नहीं। यह माना कि आप बहुत सुन्दर हैं, हमारी हीरोइन से भी अधिक, परन्तु इसके साथ-साथ और भी ऐसे गुण हैं जिनका होना बहुत आवश्यक है, तब ही एक लड़की सफल अभिनेत्री बन सकती है।”

“नाच, उछल-कूद मिलनसारी...?”

“जी नहीं, यह सब तो अपने आप ही आ जाता है। एक आवश्यक बात जो होनी चाहिए वह अच्छे घराने की लड़कियाँ कभी पसन्द नहीं करती।”

“क्या—?” प्रभा ने काँपते दिल से पूछा ।

“यहाँ आपको अपनी मुस्कुराहट नीलाम करनी पड़ेगी—मुफ्त। प्रोड्यूसर, डाइरेक्टर, फाइनैन्सर्स और वे चन्द लोग भी जिन पर फिल्म की सफलता निर्भर करती है, एक नई अभिनेत्री को रेंस का थोड़ा मान

राख के फूल : : ३६

कर दौंव लगाने से पहले यह उसकी सवारी करके अपना मूल्य अवश्य निकाल लेना पसन्द करते हैं। कितनी ही लड़कियाँ रोजाना घरों से भाग-भाग कर आती हैं और जब अपनी मुस्कुराहट बेचने के बाद भी वह इस संसार में अपनी मेहनत का फल नहीं पातीं तो जीवन से निराश होकर आत्म-हत्या कर लेती हैं। घर किस मुँह से जायें, जब भाग कर ही आई हों ?”

“तो...” प्रभा निराश हो गई।

“मेरी मानिए और घर लौट जाइए। यदि आना ही है तो घर से किसी के साथ आइए। घर से तो आज्ञा लेकर ही आई हैं आप ?”

प्रभा न नहीं में सिर हिला दिया। आँखों में आँसू आ गये।

“क्यों ? अब तो आप एक अभिनेत्री बन चुकी हैं, फिर भी घर वालों ने आज्ञा नहीं दी ?”

वह तब भी कुछ नहीं बोली।

“समझा.....” एक गहरी सास लेते हुए उसने कहा—घर वाले समझते होंगे लड़की वहाँ जाना चाहती हैं, जहाँ सिवाय बदनामी के कुछ भी नहीं।”

प्रभा की आँखों से आँसू बाहर उमड़ आए।

“कोई और बात है क्या ?”

वह तब भी कुछ नहीं बोली। रुमाल से अपने आँसू पोंछने लगी।

“शायद घर वाले आपकी शादी उससे कर देना चाहते हैं जिसे आप जरा भी नहीं चाहती ?”

“जी ? जी हाँ...” वह तुरन्त भूठ का सहारा लेकर बोली—

“मेरे होने वाले ‘बह’ काले और इतने मोटे हैं कि एक बार बैठ जाते हैं तो उठ नहीं पाते, उठ जाते हैं तो बैठ नहीं पाते। नाटे हैं और एक आँख से काने भी हैं।”

“अरे !” उसने आश्चर्य से देखा।

“जी हाँ...” बात बनती देखकर वह फिर बोली—“केवल दीलत के पीछे ही वे मुझे उस जानवर को सौंप देना चाहते हैं।”

४० :: राख के फूल

“आप लोग बहुत गरीब हैं क्या ?”

“मैं एक बहुत ऊँचे खानदान से सम्बन्ध रखती हूँ। परन्तु जमींदारी छिन जाने के बाद अब पिता जी पर इतना कर्ज हो चुका है कि हमारी हवेली बेचने के बजाय वह मुझे ही बेच देना चाहते हैं।” एक झूठ को सच बनाने के लिए उसने दूसरे झूठ का सहारा लिया।

“तब तो ठीक है” कैमरामैन की आँखें उसके काले मुखड़े पर और चमक उठीं - “एक पशु के साथ रहकर अपनी सुन्दरता का अपमान करने से तो अच्छा है कि आप फिल्मी संसार की ऊँची सोसाइटी में रहकर सफलता की चोटी छूँ। कहाँ बैठी हैं आप ?”

“जनाना डिब्बे में...” उससे सन्तोष की साँस ली।

“कोई आवश्यकता हो तो कहने में संकोच नहीं कीजिएगा। हम फर्स्ट क्लास में बैठे हैं। वैसे चाहें तो आप हमारे साथ आ सकती हैं।” परन्तु तब ही गाड़ी ने सीटी बजा दी।

अपने डिब्बे से जब वह बम्बई सेन्दूल उतरी तो रात ने अन्धेरे का लिबास ओढ़ लिया था। फिर भी चारों तरफ बिजली की चमक-दमक देखकर एक बार उसकी आँखें चकाचाँध हो गईं। इतना बड़ा स्टेशन, इतनी बड़ी भीड़, इतनी सारी चीजें। वह चकरा कर रह गई। हाथ में एक छोटा-सा चमड़े का सूटकेस लिये वह सोच रही थी कि जाय किधर, किससे बाहर जाने का रास्ता पूछे कि तभी कैमरामैन ने उसे आ लिया।

“कहाँ ठहरने का विचार है आपका ?”

“कुछ समझ में नहीं आता कि जीवन कहाँ से शुरू करूँ ?” उसने निराश होकर कहा।

“अरे ! आप तो बहुत अच्छा बोल लेती हैं !” आश्चर्य से वह अपने दिल को छुपाता हुआ बोला “फिल्मी संसार में ऐसे ‘डायलाग’ तो बहुत जल्द सफल हो जाते हैं। यदि आप बुरा नहीं मानें तो चल कर मेरे घर ठहर सकती हैं।”

प्रभा ने उसे ऊपर से नीचे तक देखा। सफर की थकान के कारण शायद वह उसकी ओर से लापरवाह था फिर भी कदम उठाने से पहले वह काँप गई। यह बम्बई शहर, रात का अंधियारा और वह विल्कुल

राख के फूल : : ४१

अकेली। सिर झुकाए वह खामोशी से उसके साथ हो ली।

प्रभा के लिए वह रात जीवन की पहली परीक्षा लेकर आई। एक छोटा-सा फ्लैट, छोटे-छोटे केवल दो कमरे, कमरे के अन्दर रोशनी होते हुए भी अंधेरा-अंधेरा-सा था। अजीब घुटन थी, जैसे यहाँ कोई उसका गला दबा रहा हो। कैमरामैन ने अपने बीबी-बच्चों को जाने कहाँ भेज दिया, तुरन्त ही, जैसे पहले से ही हर बात का प्रबन्ध कर रखा हो। रात के अंधियारे में जब वह अपने पलंग पर लेटी तो नींद आँखों से कोसों दूर शायद उसकी अपनी जन्मभूमि में भटक रही थी। रह-रह कर उसे अपना घर, अपनी पुरानी हवेली, वह राजस्थानी हरे-भरे खेत, याद आ रहे थे जिन्हें नफरत से त्याग कर वह आज यहाँ चली आई थी। इस समय दीपक भी उसे याद आया। अपनी वह बड़ी-बड़ी खामोश आँखें, कितना प्यार, कितना दर्द था उनमें उसके लिए। वह इस रात के अंधेरे से घबराकर करवटें बदल रही थी। चाहती थी कि जल्द से जल्द यह घटा उठ जाय, अंधेरा छूट जाए और सुबह नया प्रकाश लेकर आ पहुँचे।

“नींद नहीं आ रही है क्या?”

कुछ दूर ही दूसरे पलंग पर लेटे हुए कैमरामैन ने पूछा।

अंधेरे को चीरती हुई यह आवाज उसके दिल में तीर के समान आ लगी। वह काँप उठी।

“आ ही जायेगी—” उसने बड़ी कठिनाई से उत्तर दिया।

“मैं सुला हूँ?” उसने फिर पूछा।

प्रभा का दिल जोर से धड़का। आन वाले खतरे का अनुमान करके वह पसीने-पसीने हो गई। खामोशी से गहरी-गहरी साँस लेने लगी।

उसकी खामोशी का गलत अनुमान लगाकर वह उठा और उसके समीप चला आया, एकाएक, अचानक ही, जसे बहुत देर से दबी हुई दिल की चिनगारी अब हवा पाकर शोला बन जाना चाहती थी।

वह उठ कर बैठ गई। डर से उसका शरीर और भी बुरी तरह काँपने लगा।

“मैं बाहर जाना चाहती हूँ।” पैरों को नीचे करती हुई वह बोली।

४२ :: राख के फूल

“हाँ — उसने सारा हास्य और शरणागति प्रकट करके कहा।
 “यह बम्बई है प्रभार देवी, राजस्थान का कोई गाँव नहीं।” वह
 उसी के पलंग पर बैठता हुआ बोला, “दिन में यहाँ रहने का ढंग लोगों
 का अलग है और रात में अलग। यहाँ रातें जितनी अंधेरी होती हैं उतनी
 ही यहाँ के लोगों का असली रूप और भी निखर आता है। इसी का
 नाम बम्बई है। तुमने यदि इस दरवाजे से दो कदम भी आगे बढ़ाया तो
 फिर वापस नहीं आ सकोगी। यहाँ के दादा तुम्हें उठा ले जायेंगे।
 महीनों तुम्हें वह अपना खिलौना बना कर खेलते रहेंगे। फिर तुम्हारा
 व्यापार शुरू होगा। जब तक तुम्हारी सुन्दरता साथ देगी वे तुमसे
 रुपया कमाते रहेंगे। फूल के समान रस की एक-एक बूँद निचोड़-निचोड़
 कर वह तुम्हारी सुगन्ध से आनन्द उठाते रहेंगे। और जब तुम सूख कर
 कांटा हो जाओगी, जब तुम्हारे शरीर पर समय से पहले ही सफेदी छा
 जायेगी, अंग-अंग से हड्डियाँ झलकने लगेंगी तो यह तुम्हें दूध की मक्खी
 के समान बाहर फेंक देंगे। तुम्हारी रही सही जिन्दगी को वह किसी
 गैंग में सम्मिलित करके तुम्हारे द्वारा चार सौ बीसी का धंधा आरम्भ
 करेंगे। तुम्हारे कंधे पर बन्दूक रख कर वह अवगिणित लोगों को अपना
 निशाना बनायेंगे। तुम उनके पापों की सफलता का साधन बनोगी।
 और फिर एक दिन जब तुम बूढ़ी होकर इनके किसी काम की नहीं रह
 जाओगी तो वह अपना राज छिपाए रखने के लिए तुम्हारा मुँह सदा
 के लिए बन्द कर देंगे। तुम इनका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। चाहो भी
 तो पुलिस में रिपोर्ट नहीं लिखा सकती। ऐसी रिपोर्टों से तो बम्बई की
 पुलिस थक चुकी है। जिसका भी पता लगाना चाहती है वही शरीफ
 आदमी निकलता है। जिसको भी गिरफ्तार करना चाहती है वही
 उसका अन्नदाता होता है। आखिर किस-किस की हिकाजत के लिए
 यह अपना कीमती समय नष्ट करे?” कैमरामेन ने इतमिनान से एक
 सिग्रेट जलायी। दियासलाई की रोशनी में उसने देखा, प्रभा की आँखों
 में आँसू हैं। रोशनी की एक झलक में उसका मुखड़ा इतना सुन्दर लगा
 कि वह आँसुओं का मूल्य लगाना ही भूल गया — “तुम हीरोइन बनने
 राख के फूल : : ४३

आई हो.....” वह कहती ही गया—“हैरान कोई इस प्रकार नहीं बन जाता। याद है मैंने गोदहा जंकशन पर क्या कहा था? मंजिल पर पहुँचने के लिए एक-एक सीढ़ी होकर चढ़ा जाता है। जहाँ मोड़ कठिन हो वहाँ अकल से काम लेना चाहिए। मैं इस मंजिल का पहला मोड़ हूँ और इस मोड़ को छलांग कर तुम कभी आगे नहीं बढ़ सकती। मैं ही वह हूँ जो तुम्हें अपने कैमरा द्वारा सुन्दर से सुन्दर बना कर सफलता की ऐसी मंजिल दिला सकता हूँ जिसका सपना देखकर तुम आज घर से सदा के लिए चली आई हो। मैं ही तुम्हें प्रोड्यूसर और डाइरेक्टर से मिलाऊँगा। मुझे ही तुम्हारा स्क्रीन-टेस्ट सौंपा जायेगा। बोलो, दरवाजा खोल दो। बाहर जाओगी या...”

प्रभा फूट-फूट कर रो पड़ी। उसकी हिचकियों की आवाज कमरामैन की गहरी-गहरी साँसों में घुल-मिल कर डूब गई—बूढ़ी और फलती हुई घरधराती साँसें, जैसे दमा का वह एक मरीज हो जिसे दिन में पहली बार जब प्रभा ने देखा तो डर गई थी। कितनी भयानक सूरत थी उसकी! परन्तु उसके सपनों की मजबूत दीवारों ने उसे इतना विश्वास दिला दिया था कि वह अपने इरादों के विरुद्ध कुछ सोचना ही नहीं चाहती थी। आज उसी का फल उसे भोगना था—और वह भोग रही थी—सिसक-सिसक कर, तड़प-तड़प कर, रो-रो कर। और उसकी पुकार यहाँ कोई सुनने वाला नहीं था, उसके दिल का दर्द कोई महसूस करने वाला नहीं था। हर आह इस अंधेरे कमरे की चारदीवारी में घुट-घुट कर रह गई।

मनुष्य के जीवन का दिन की रोशनी और रात के अंधियारे से कितना गहरा सम्बन्ध है! रोशनी जो पापों से बचकर मनुष्य को एक अच्छा कर्म करने पर भुकाती है, परन्तु रात स्याही का वस्त्र ओढ़ कर दिल व दिमाग की सारी अच्छाइयों पर यूँ अंधेरा डाल देती है कि मनुष्य को सिवाय बुराई के कुछ भी नहीं सूझता, शायद इसलिए कि अंधेरे का साथी पाप है और संसार का हर पाप, हर जुर्म ऐसे समय बहुत आसानी से हो जाता है, जब कि रोशनी इसके उपरान्त मनुष्य के जुर्म और पापों को प्रकट करके उसे संसार के सामने नंगा कर देती है—

विल्फुल नंगा ।

दूसरे दिन कैमरामैन ने उसे एक प्रोड्यूसर से मिलाया और यूँ अलग हो गया मानो एक बला उसके सिर से टल गई । प्रोड्यूसर द्वारा उसे एक एकस्ट्रा रोल मिला, बहुत साधारण, बहुत छोटा, परन्तु वह खुश थी । उसे सन्तोष था । धीरे-धीरे ही तो वह सफलता पायेगी ।

शाम को प्रोड्यूसर ने उसे ताज होटल में बुलाया । वहीं उसके साथ उसने खाना खाया, वहीं एक कमरे में वह उसकी रात भर मेहमान रहीं । यहाँ भी वह रोई, कुछ देर सिसकियाँ ली, कुछ हिचकचाई, परन्तु फिर उसने हालात के सामने हथियार डाल दिए । कब तक जमाने से यूँ ही अकेली लड़ती ? कमरे के वातावरण को एक बनावटी मुस्कराहट से उसने बड़ी सुन्दरता से सँवार दिया । इज्जत जब लुट ही चुकी हैं तो पछतावा कैसा ? कुँवारापन नारी का सबसे बहुमूल्य रत्न है जिसके एक बार खो जाने के बाद संसार की सारी दौलत भी उसे वापस नहीं ला सकती । अब उसके जीवन में बचा ही क्या है ? कैसी हिचकिचाहट ? कैसी शर्म ? कैसा इनकार ? नारी—और नारी का अस्तित्व ही क्या है ? जब गिरती है तो गिरती ही जाती है । गिरकर अपने ही पाप के दलदल में धँसती जाती है, इस प्रकार कि वहाँ से वह फिर बाहर नहीं निकल पाती । ऐसी मंजिल पर पहुँच जाती है जहाँ से वापिस नहीं आ सकती । गिर कर कभी नहीं उठ पाती—कभी नहीं ।



एक दिन वह स्टूडियो में खड़ी शूटिंग की तैयारी में मगन थी । शरीर पर वस्त्र इतना छोटा था कि अंग-अंग छलक कर बाहर आ जाना चाहता था । शूटिंग केवल खास खास लोगों को ही देखने की ही आज्ञा थी । लोग उसे यूँ घूर रहे थे मानो नजरें उस पर चिपक कर रह गई हों, उसके शरीर पर मानो गोंद लगी हुई थी ।

अचानक जाने कहाँ से दीपक आ धमका । प्रभा को इस हालत में देखकर तो वह पहले पहचान ही नहीं पाया । सुर्ख रंग की लीप-पोत ने उसके मुखड़े का वास्तविक रूप ही बिगाड़ कर रख दिया था ।

राख के फूल :: ४५

“प्रभा—” उठते ही उसका नाम लिया था, बहुत नफरत से।

“प्रभा कैमरे के सामने जा रही थी कि अचानक रुक गई। लोग उसे प्रभा देवी कहा करते थे। यह किसने उसका केवल नाम ही पुकारा? उसने मुड़कर देखा और साथ ही और लोगों की भी निगाहें उस तरफ उठ गईं। प्रभा ने शूटिंग रोक दी। लपक कर एक गाऊन से अपना खुला तन ढांका और पैर पटकती हुई सख्ती से उसके पास चली आई।

“तुम यहाँ क्यों आये?”

“तुम्हें लेने आया हूँ प्रभा—” उसने नम्रता से कहा।

“क्यों?” वह गुस्से में बोली—“तुम्हें नहीं मालूम मैंने सदा के लिए घर छोड़ दिया है?”

“हाँ, लेकिन...”

“तुम यहाँ से तुरन्त चले जाओ.....” उसकी बात काटती हुई वह बोली—“इस फिल्म में मेरा बहुत आवश्यक रोल है। शायद इसके बाद ही मेरी सफलता के सारे दरवाजे खुल जायें। मैं इस सुअवसर को कभी नहीं छोड़ सकती।”

तुम्हारे पिता जी की हालत बहुत खराब है। इसलिए मैं तुम्हें हर जगह ढूँढते-ढूँढते यहाँ पहुँचा हूँ। बड़ी मुश्किल से दरवान ने आने दिया जब मैंने कहा कि मैं तुम्हारा नौकर हूँ और तुम्हारे पिता जी की...।”

“किसके पिता जी? मेरे?” प्रभा नफरत से मुँह बना कर बोली, “शायद उन्हीं के कर्मों का यह फल है जो मैं अनजाने में ऐसी गलती करने पर पागल हो गई थी और आज, आज अपनी आँखों से देख लो मैं कैसी सजा भोग रही हूँ।” प्रभा की आँखें भीग गयी। शायद वह पछता रही थी। अपने जीवन पर लज्जित थी।

“अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है प्रभा। तुम घर चलो। सब ठीक हो जायेगा।” दीपक ने समझाया।

“नहीं—” प्रभा ने दृढ़ होकर कहा, “अब मैं इस दलदल से बाहर नहीं निकल सकती। अब इसी दलदल में मैं अपने सपनों के महल की

४६ :: राख के फूल

नींव डालूँगी। इसे मजबूत बनाऊँगा। इसी में रह कर मैं अपने सारे
अरमानों को पूरा करूँगी। तुम जाओ। तुरन्त चले जाओ वर्ना... मैं
तुम्हें यहाँ से जबरदस्ती निकलवा दूँगी। भेरी सफलता के रास्ते में जो
भी आएगा मैं उसे कुचल दूँगी।” कहते-कहते प्रभा का पारा एकदम
से गरम हो गया। वह नम्रता एक पल में मिट गई जो अभी-अभी आँखों
से छलकी थी।

“कौन साहेब हैं यह प्रभा देवी?” किसी सेठ ने समीप आकर
पूछा।

“मेरा कोचवान घर का नौकर मुझे लेने आया है।”

एकाएक सब हँस पड़े, चिल्ला-चिल्ला कर, चीख-चीख कर, जैसे
पदों पर चार्ली का तमाशा देख लिया हो। वे हँसते ही रहे, जब तक
कि वह शर्म से सिर झुका कर वहाँ से भाग नहीं गया। दूर तक उसके
कानों में यह ठहाके गरम-गरम सीसे के समान पिघल कर उतरते रहे।
प्रभा की हँसी इन सब में कितनी तेंज थी।

दिन बीतते गये। हर पल आया और प्रभा की आत्मा को कुचल
कर चलता बना। फिर एक दिन आत्मा मर गई। उसने इसे अपने
शरीर की खोखली कब्र में दफन कर दिया, सदा-सदा के लिये।
मजबूरियों के सामने उसने घुटने टेक दिये। हालात से हार मान ली।
समाज के आगे अपने को अर्पण कर दिया। उसका चाल-चलन गिरता
ही गया। वह झुकती ही गई, गिरती ही गई, हर उस नारी के समान
जो फिर कभी नहीं उठ सकती। शहर के बड़े-बड़े दौलतमन्द और समाज
के ठेकेदारों के बाजुओं में वह झूला झूलती हुई कहां से कहां निकल
आई। एक रास्ते से भटक कर दूसरे रास्ते पर आ गई। यहां भी कोई
मंजिल नहीं थी, कोई ठिकाना नहीं था। मजबूरियों का शिकार होकर
वह एक कागज का फूल बन गई जिस पर इत्र छिड़क कर वास्तविक
सुगन्ध को लाने का प्रबन्ध किया गया हो। उसने खुले आम अपनी
सुन्दरता का सौदा किया और दोनों हाथों से दौलत बटोरती रही।
बहुत जल्द ही वह इस योग्य हो गई कि दौलत से अपनी खोई हुई
इज्जत, समाज में अपना खोया हुआ स्थान प्राप्त कर ले। कोई सीमा
राख के फूल : : ४७

तक वह सफल भी हो गई। समाज में उसने एक ऊँचा स्थान भी बना लिया। दौलत जिसके पास हो वह क्या नहीं खरीद सकता? नौकर-चाकर, कार, बंगला। परन्तु एक चीज वह नहीं पा सकी। जिस आत्मा में उसने अपने खोखले शरीर में दफन कर रखा था वह फिर नहीं जीवत हो पाई। वह सन्तोष उसे नहीं मिला जिसकी उसे खोज थी। वह खुशी उसके दिल में गुदगुदी बनकर नहीं पैदा हुई जिसको एक बार उसने यहां के संसार में रखने से पहले प्रतीत किया था। ऐश-व-इशरत का प्याला पीते-पीते एक दिन उसका मुँह भी कड़वा हो गया। वह चलते-चलते थक गई। जीवन उसके कांधे पर एक बोझ बन गया। वह निराश हो गई। आशायें टूट गईं, इच्छाएं मर गईं, साहस जवाब दे गया। उसका जी चाहा इसी दोराहे पर बैठ जाये जहां से वह आगे नहीं बढ़ सकती थी। यही पैर फैलाकर लेट जाये जहां से पीछे जाने का कोई रास्ता नहीं था। दीपक ठीक ही कहता था। विल्कुल ठीक। उसकी आंखों में एक भोली-भाली तस्वीर आकर धूम गई। भूली-विसरी यादें एक-एक करके आने लगी। राजस्थान का वह गाँव, हरे-भरे खेत, टेढ़ी-मेढ़ी पगण्डियाँ—घोड़ा गाड़ी, कोचवान—हाँ, कोचवान ही तो था दीपक।

अब वह पछता रही थी। जाने कैसे उसकी निगाहों ने लम्बी-लम्बी पलकों का आँचल ओढ़ कर ऐसा सपना देख लिया था कि वह कांटों में उलझती अचानक राजस्थान की खुली हवा को घुंटाघुंटा वातावरण समझ कर बम्बई की जगमगाती दुनिया में बहक आई। परन्तु अब उसे मालूम हुआ कि वास्तविकता क्या है। बड़ी-बड़ी बिल्डिंगें आकाश का मुँह चूमें खड़ी थीं कि यादों भरी ठंडी ठंडी हवाएं भी एन्हें छलांग कर अन्दर नहीं आ पा रही थी। उसका दम घुट गया। अशान्ति उसके मन में नामूर के समान रस रही थी। वह जीवन की खुशियों में चार चाँद लगाने आई थी, घर की मान मर्यादा से बगावत कर के इतनी दूर चली आई थी, पानी की उस लहर के समान जो अपनों का साथ छोड़ कर शांति की तलाश में किनारों की ओर लपकती है, परन्तु

४८ :: राख के फूल

अब उसे पता चला कि शांति तो यहां भी नहीं है। वह बगावत तो उसका बचा-खुचा इतमिनान, उसके जीवन का ठहराव, भी अपने साथ समेट ले गई और अब उसके पास एक बेकली, एक बेचैनी और अपनी निराश इच्छाओं के सिवाये कुछ भी नहीं था। हां, कुछ भी तो नहीं।

हर रात एक शमा बनकर उजागर होती परन्तु सबह होने से पहले उसे इसको बुझा देना पड़ता। हर अन्धेरा आशा की एक झलक लेकर आता परन्तु सुबह की चमकती किरणों इसका गला घोट देती। वह इन्हीं विचारों के जाल में उलझ-उलझ कर फड़फड़ाती रही। एक तमाशा था उसका जीवन, जिसे वह खुद देख रही थी जैसे उसकी नींद में डूबी इच्छाएं फिर वास्तविक संसार में आकर उसके मस्तिष्क में ऊधम मचाती हुई हौले-हौले अपनी मौत मर रही हों। अब उसके सामने हजारों रास्ते थे, हर एक पर चल कर वह यश और धन कमा सकती थी, और कमा रही थी। लोगों के दिलों पर छाकर अपनी बहुत-सी इच्छाएं पूरी कर सकती थी, और कर रही थी। परन्तु उसने देखा, इतने बड़े युग में, इन रास्तों पर कहीं भी दिल की रोशनी से कोई दीप नहीं जल रहा था। अन्धेरा था — बिलकल अन्धेरा, और यह अन्धेरा उसके प्यार, उसकी मानमर्यादा, उसके खानदान की सफेदी पर बुरी तरह फैल कर उसके दिल की सारी खुशी को हड़प लेना चाहता था। उसने लाख कोशिश की कि इस रास्ते पर कहीं भी एक सच्ची शांति की धुंधली-सी किरण मिल जाये परन्तु नजरें निराशा की अन्धेरी खाई में जाकर डूब-डूब गईं। काश ! गुलाब तोड़ने से पहले उसने कांटे तो देख लिये होते अब यह कांटे चुभ-चुभ कर उसके तन में जहर धोलते जा रहे थे। उसके रक्त की बून्द बून्द में नासूर के समान बह रहे थे।

वह हीरोइन नहीं बन सकी।

हीरोइन बनना एक कला है। कला सबमें नहीं होती। उसमें भी नहीं थी कला की पहचान कभी-कभी फिल्म के डाइरेक्टर प्रोड्यूसर को भी नहीं होती क्योंकि कला की कीमत होती है, और कीमत साधारण जनता देती है। यह तो जनता पर निर्भर है जिन्हें जो पसन्द आ गया

राख के फूल : ४६

हैं। दिल में एक डर छाया रहता है कि जीवन की यह बहती धारा कहीं टूट न जाये, देवनागर के पास सोने की खान है। कई बच्चे, बीबी, भाई-बहन और जाने कितने ओर रिश्तेदार होंगे जिनका उनकी दौलत में बराबर का साझा होगा। सिर गंजा है। आंखों से काने हैं। कम्बल को गुदों की शिकायत है। आहूजा जी की दौलत पर भी ऐसे ही दूसरों का अधिकार होगा। पेट निकला है, इस प्रकार जैसे चीनी की बोरी छिपाकर ब्लैक के लिये रख लिया हो। गोरे और गोल-मटोल चेहरे पर सफेद-सफेद मोटे होंठ कोढ़ के समान लगते हैं। धुत ! लक्ष्मी चन्द इतने मोटे हैं कि बैठ कर उठ नहीं सकते, उठकर बैठ नहीं पाते। रोटी के तवे के समान काले। कन्जी-कन्जी आंखें, जैसे अपने हीरो को छिपाकर इसमें रख लिया हो। दिल के इतने पुराने मरीज हैं फिर भी जिये जा रहे हैं। करोड़ीमल के तो दांत ही देख कर डर लगता है। बड़े-बड़े, पीले-पीले ऊपर से चेचक के गड्ढों से भरा सफेद चेहरा। कंधे और गर्दन की मोटाई एक होकर सीने से मिलकर पेट पर यूँ उठ गई है जैसे ऊँची-नीची ढाल वाली एक सड़क। सड़कों के ही तो वह सरकारी कान्ट्रक्टर हैं। छिः यहां तो कोई आदमी भी उसके योग्य नहीं हैं। जो हैं। वह बीबी के डर से उस पर आंख नहीं उठाते, जैसे चिड़ी के गुलाम। जो इस जिम्मेदारो से भी स्वतन्त्र हैं वह उसकी ओर देखना भी नहीं पसन्द करते। जो देखना पसन्द करते हैं तो केवल रात में। दिन में यूँ नजरें चुराते हैं जैसे उसकी संगति लोगों की नजर में पड़ कर उन्हें बदनाम कर देगी, घर की धन दौलत से वंचित कर देगी। उसे जैसे कोई रोग हो। हां—एक आदमी—केवल एक आदमी है उसके योग्य—राय साहेब। उनकी पत्नी को मरे हुए शायद आठ दस साल हो रहे हैं। उनका इस संसार में कोई नहीं—यह भी अब किसी के नहीं हैं। बिल्कुल अकेले हैं, स्वतन्त्र हैं, बेफिक्र हैं। उनके पीछे कोई रोब वाला नहीं। ऐसा ही मनुष्य उसके योग्य हो सकता है। क्या हुआ यदि वह बूढ़े हैं ? बाल सफेद है ? बुढ़ा मर जायेगा तो सारी दौलत पाकर वह आराम-से जीवन बिता सकेगी। फिर इतमिनान से अपने मन

राख के फूल : : ५१

उसकी माँग कर बैठे। उसे कामयाब बना बैठे। जो नहीं पसन्द आये उसकी फिल्मों देखना बन्द कर देते हैं। फिर फिल्म पलाप कर जाती है। प्रोड्यूसर का दीवाला निकल जाता है। डिस्ट्रीब्यूटर आयन्दा उसकी फिल्म लेने से कान पकड़ लेते हैं।

उसने हीरोइन बनने की आशा छोड़ दी। अपने आपको भूठी तसल्ली देकर उसने इस मोहताजी से मुँह मोड़ लिया। अब उसके पास सब कुछ था—सब कुछ। बड़ें-बड़े क्लबों में बड़े-बड़े लोगों से सम्पर्क रख कर उसने अपने जीवन को भूठी शान-व-शौकत के लवादे में लपेट कर सन्तुष्ट कर लिया। वह एक ऐसा फूल बन गई जो सूर्य डूबने के बाद सिर उठाता है, रात में खिलता है और अन्धेरे का सहारा लेकर महकता है।

उसकी आवश्यकताओं के अनुसार उसका खर्च भी बहुत बड़ा था। बनाव-शृंगार, शान-व-शौकत, खाना सिग्रेट, शराब, जुआ और एक दिन जब उसकी नज़र आइने पर पड़ी तो वह अचानक ही चौंक पड़ी। शरीर पर चरबी छा रही थी। बाजू मोटे और पोपले होकर लटकते जा रहे थे। पेट निकल आया था। गर्दन पर भुरियाँ आ रही थी। पैसा कब तक साथ देगा? अभी दो साल ही तो हुए हैं, जब वह एक दुबली-पतली, खूबसूरत-सी लड़की होकर बम्बई की सरहद में दाखिल हुई थी। कुवारे शरीर से शरारे फूट-फूट पड़ते थे। सदा भीनी-भीनी खशबू आती रहती थी। परन्तु अब उसका शरीर खोखला है। आत्मा मर चुकी है। उसने सब कुछ गँवा दिया। हाँ, सब कुछ। कुछ भी तो नहीं चाब उसके पास।

उसे याद आया क्लब के अब भी ऐसे कितने ही बूढ़े नौजवान हैं जो उसे सदा के लिये अपनाना चाहते हैं। उसकी प्यार भरी मुस्कुराहट के लिए अपना सब कुछ लुटा देना चाहते हैं। उसे अपनाने में अपना गर्व समझते हैं। परन्तु इन सब में ही बहुत सारी कमियाँ हैं। किसी ने सत्य ही कहा है : स्वास्थ्य जीवन का सबसे बड़ा धन है। और यह लोग संसार का सारा धन रखने के पश्चात् भी स्वास्थ्यहीन हैं। यह कभी खुश नहीं रह सकते क्योंकि हर पल शारीरिक तकलीफ के कारण कुदते रहते

५० :: राख के फूल

हैं। दिल में एक डर छाया रहता है कि जीवन की यह बहती धारा कहीं टूट न जाये, देवनागर के पास सोने की खान है। कई बच्चे, बीबी, भाई-बहन और जाने कितने ओर रिश्तेदार होंगे जिनका उनकी दौलत में बराबर का साझा होगा। सिर गंजा है। आंखों से काने हैं। कम्बुष्ट को गुर्दे की शिकायत है। आहूजा जी की दौलत पर भी ऐसे ही दूसरों का अधिकार होगा। पेट निकला है, इस प्रकार जैसे चीनी की बोरी छिपाकर ब्लैक के लिये रख लिया हो। गोरे और गोल-मटोल चेहरे पर सफेद-सफेद मोटे होंठ कोढ़ के समान लगते हैं। धुत ! लक्ष्मी चन्द इतने मोटे हैं कि बैठ कर उठ नहीं सकते, उठकर बैठ नहीं पाते। रोटी के तवे के समान काले। कन्जी-कन्जी आंखें, जैसे अपने हीरो को छिपाकर इसमें रख लिया हो। दिल के इतने पुराने मरीज हैं फिर भी जिये जा रहे हैं। करोड़ीमल के तो दांत ही देख कर डर लगता है। बड़े-बड़े, पीले-पीले ऊपर से चेचक के गड्ढों से भरा सफेद चेहरा। कंधे और गर्दन की मोटाई एक होकर सीने से मिलकर पेट पर यूँ उठ गई है जैसे ऊँची-नीची ढाल वाली एक सड़क। सड़कों के ही तो वह सरकारी कान्ट्रक्टर हैं। छिः यहां तो कोई आदमी भी उसके योग्य नहीं हैं। जो हैं। वह बीबी के डर से उस पर आंख नहीं उठाते, जैसे चिड़ी के गुलाम। जो इस जिम्मेदारो से भी स्वतन्त्र हैं वह उसकी ओर देखना भी नहीं पसन्द करते। जो देखना पसन्द करते हैं तो केवल रात में। दिन में यूँ नजरें चुराते हैं जैसे उसकी संगति लोगों की नजर में पड़ कर उन्हें बदनाम कर देगी, घर की धन दौलत से वंचित कर देगी। उसे जैसे कोई रोग हो। हां—एक आदमी—केवल एक आदमी है उसके योग्य—राय साहेब। उनकी पत्नी को मरे हुए शायद आठ दस साल हो रहे हैं। उनका इस संसार में कोई नहीं—यह भी अब किसी के नहीं हैं। बिल्कुल अकेले हैं, स्वतन्त्र हैं, बेफिक्र हैं। उनके पीछे कोई रोब वाला नहीं। ऐसा ही मनुष्य उसके योग्य हो सकता है। क्या हुआ यदि वह बूढ़े हैं? बाल सफेद है? बुढ़ा मर जायेगा तो सारी दौलत पाकर वह आराम-से जीवन बिता सकेगी। फिर इतमिनात से अपने मन

राख के फूल : : ५१

पसन्द लड़के को पति बना कर एक अच्छा जीवन व्यतीत कर सकेगी। कौन-सा वह बूढ़ा अधिक दिन जियेगा ही? पीता इतनी है कि कभी भी दिल की गति रुक जाये। वह आज ही उनसे मिलेगी।

प्रभा राय साहेब के जीवन में इतनी आसानी से दवे कदमों दाखिल हुई कि उन्हें महसूस ही नहीं हुआ। इस प्रकार मुस्कुराहटें बिखेरती वह उनके दिल की द्वार खोल कर अन्दर आई कि वह कुछ कह ही नहीं सके। उन्हें सोचने तक का समय नहीं मिला। अपनी शर्मीली अदाओं द्वारा वह इस प्रकार उनका ख्याल रखती कि राय साहेब उसके लिये अच्छी राय बनाये बिना रह ही नहीं सके।

“इतनी शराब मत पीया कीजिये—वह दिल की गहराई से सहानुभूति दिखाती हुई कहती।”

“न पीयुं तो रह नहीं सकता।”

Rajan

“कोशिश करके देखिये। मनुष्य को शराब का मोहताज नहीं बनना चाहिये, वना शराब ही उसे पीने लगती है। शराब तो केवल मनुष्य के शरीर को तर-व-ताजा रखने के लिये ही बनाई गई है। ऐसा भी क्या कि होश ही गुम हो जाये।”

“किसके लिए होश में रहूं प्रभा देवी?”

“पहले होश में रहकर तो देखिये। खुद ही मालुम हो जायेगा।”

रायसाहेब ने आंखें उठाकर देखा—देखते ही रहे। दूर, छाये वादलों की आड़ में प्यार की एक नई देवी हाथ फैलाये उन्हें अपने में सम्मालने को तड़प रही थी। उन्होंने अपने पग आगे बढ़ा दिये। जाने कैसी यह सहानुभूति की कशिश थी?

बात बड़ती ही गई। जान पहचान के लोगों में काना-फूसी आरम्भ हुई। मामला गम्भीर है। कुछ लोगों ने राय साहेब को समजाया भी। उनसे सहानुभूति रखते हुए उन्हें अपने निकटीय सम्बन्धियों की खूबसूरत और जवान लड़कियां भी अर्पित करना चाहा ताकि वह प्रभा की मोहब्बत का इतना मोटा पर्दा पड़ चुका था कि वह कुछ और सुनना ही नहीं पसन्द करते थे। प्रभा ने अपनी कोमल आदाओं द्वारा उन्हें जुल्फों में यूँ कैद कर लिया था कि वह अपने दोस्त-यारों की अच्छी राय को

५२ : : राख के फुल

भी जलन और हसद का ढोंग समझने पर मजबूर हो गये। उन्होंने इस बात को भी राज में ही रखा कि जल्द ही वह प्रभा को आपने जीवन में सम्मिलित करके अब सदा के लिए क्लव के वातावरण को त्यागने वाले हैं। वह लोग क्या सोचते? यहां उनकी कितनी इज्जत थी। इनके दिलों में उनके प्रति कितनी सहानुभूति थी। लोगों को कितना विश्वास था कि वह अपनी पत्नी के अतिरिक्त मन में किसी और का स्थान बना ही नहीं सकते। किस मुंह से उनके आगे अपने सच्चे और अभिट प्यार का वह दावा करते जो उन्हें अपनी स्वर्गवासी पत्नी से था?

प्रभा को वह पूरी तरह समझ चुके थे। उसे दौलत की नाम मात्र भी चाह नहीं है। उसने तो कभी इशारों में भी पैसे की चाह नहीं की। उल्टा वह उनके लिये जबरदस्ती खर्च करती आई हैं। कभी उसने यह नहीं पूछा कि वह कितनी मिल्नों के मालिक हैं? कितनी जायदाद है? कहां पर हवेली है? कितना बैंक बैलन्स है? यदि राय साहेब इसका जिक्र भी करना चाहते तो वह बड़ी खूबसूरती से बात का मोड़ यूँ बदल देती जैसे उसे यह बातें जरा भी पसन्द नहीं। वह तो अपने सुख होठों की सुन्दर मुस्कुराहट के पीछे साँप का वह जहर उनके नयनों द्वारा दिल में उतार रही थी जो उन्हें शहद की मिठास देता हुआ अन्दर ही अन्दर इकट्ठा होता जा रहा था। यह ज़िहर मीठा होने के साथ-साथ बहुत हल्का असर रखता था, इसीलिये वह सब से बड़ी समय का बहुत बेचैनी से इन्तजार कर रही थी। उसे मालूम था यह जहर अपना असर कर चुका है। राय साहेब उनके प्रेम में इस प्रकार कैदी है कि अब कभी ज़ंजीर नहीं तुड़ा सकते।

एक दिन अचानक ही वह राय साहेब के दफ्तर पहुँच गई। शाम का समय था और दफ्तर बन्द होने वाला था।

“अरे प्रभा — तुम !” वह अपनी कुर्सी से खड़े होते हुए बोले।

“हां—” उसने बड़े भोलेपन से उत्तर दिया “दिल धवरा रहा था, सोचा आपके पास ही चलूँ।”

“हां-हां, क्यों नहीं ?” वह बोले “अच्छा हुआ जो तुम चली आई। मैं भी कभी-कभी अपने काम में इतना उलझ जाता हूँ कि जी चाहता है यहां से भाग जाऊँ। कभी-कभी समझ नहीं पाता कि आखिर मैं इतना बड़ा करोबार संभाल कितने लिये रहा हूँ? मगर फिर सोचता हूँ

राख के फूल :: ५३

कि यदि मेरी दौलत के सहारे सैकड़ों लोगों की रोजी चल रही है तो कब बुरा है ! शायद यह इन गरीबों की ही प्रार्थना है कि इतना बड़ा गम कब पहाड़ उठाने के पश्चात् भी जी रहा हूँ ।”

“मैं यहाँ उदास होने नहीं आई ।” बच्चों के समान वह आंखों में आंसू लाकर बोली, “आइये हम बाहर चलें । आपको उदास देख कर मेरा मन रो उठता है ।”

राय साहेब ने उसकी आंखों में दर्द देखा तो चुप हो गये । अपने उदासी भूल कर उसके लिये हँसने लगे । ओरत के आंसू किसके दिल को नहीं छूते ? चाहे भले ही यह वास्तविक हों या मक्कारी के ।

दफ्तर से निकलने को तो दोनों बाहर निकल आए परन्तु इस समय वे जाय कहां ? क्लब ? नहीं नहीं । यह कोई समय है भला ? होटल ? नहीं, यह भी नहीं । कोई देख लेगा तो इस उम्र की महबूबत का मजा उड़ायेगा । पार्क ? यह भी ठीक नहीं । फिर ? हाँ.....उनका घर है—हवेली ।

“आओ मेरे घर चलो” कार का दरवाजा खोलते हुए वह बोले

“नहीं नहीं——” प्रभा झट घवारहट प्रकट करती हुई बोली

“मैं किसी के घर कभी नहीं जाती । मुझे पसन्द नहीं । मेरा मतलब... अकेले मर्द के घर जम्मा कुछ अच्छी बात नहीं ।”

नहीं प्रभा, ऐसा न कहो” राय साहेब उदास होते हुए बोले “यदि तुम्हें मुझसे जरा भी लगाव है तो मेरी बात का इनकार नहीं करना वना मुझे दुख होगा । हमें एक दूसरे का बनने के लिये समाज के कर्तव्यों को ठुकराना पड़ेगा । आओ चलो । आज हम घर पर कुछ आवश्यक बातें करेंगे : संगनी की—शादी की—आने वाले सुन्दर जीवन की—अब मैं और अधिक अकेला नहीं रह सकता— बहुत दिन तड़पता रहा हूँ जीवन की इस भुलसती आग में ।”

प्रभा खामोश हो गई । दिल की खुशियां फूट-फूट कर बाहर जाया चाहती थी परन्तु उसने बहुत कठिनाई से इन पर गम्भीरता से चादर डाल दी ।

गाड़ी स्टार्ट हुई और शाम की धूप में हवा से बातें करने लगी ।

— — X — —

सात वज रहे थे। शाम का धुंधलापन उजाले का मुँह चूम रहा था। हर तरफ खामोशी थी। मौत का सा सन्नाटा, और दिनों से भी अधिक, जैसे आज यहां दूसरी मौत हो गई हो—पारो की मौत, पारो की आशाओं की मौत, इच्छाओं की मौत, खुशियों की मौत, सपनों और जीवन की मौत।

प्रभा जा चुकी थी और राय साहेब अकेले थे। हवेली की दूसरी मंजिल पर छज्जे में एक खम्बे का सहारा लिये खड़े-खड़े वह सिगार पर सिगार फूँके जा रहे थे। छज्जे में हल्की-हल्की रोशनी थी और दूर से उनका केवल गाऊन ही दिखाई पड़ रहा था। कभी-कभी जब वह एक गहरा कश खींचते तो सिगार की राख से एक-दो चिंगारी उड़कर हवा में गुम हो जाती। उनके चेहरे पर इतनी अधिक उदासी थी जितनी आकाश पर घने काले बादलों के छा जाने से हवाओं में पैदा हो जाती है। जते समय प्रभा ने उन्हें बलब ले जाना चाहा था परन्तु वह नहीं गए। उनका मन नहीं किया। आज उन्होंने शराब भी नहीं पी। पिछले कई वर्षों में यह पहला दिन था जब वह होश में खड़े यूँ शाम के अंधकार में नज़रों से टटोल-टटोल कर कुछ ढूँढ़ रहे थे।

अचानक लान की मद्धिम रोशनी में बड़े गेट के समीप एक छाया प्रकट हुई तो वह कुछ आगे बढ़ आए। आगे बढ़ते-बढ़ते वह हवेली के उस और चले आये जहाँ से यह छाया साफ-साफ दिखाई पड़ सकती थी। ओर तब ही उनके कानों में आवाज आई।

“पारो बिटिया, तू—।” चौकीदार आश्चर्य से कह रहा था, “इस समय कहां जा रही है ?”

“सरकार ने निकाल दिया है काका।” पारो फूट-फूट कर रो पड़ी।

राख के फूल : : ५५

राय साहेब ने देखा, धुन्धली-धुन्धली रोशनी में पारो के आंसू बदली में छोटे-छोटे तारों के समान टिमटिमा रहे थे।

“निकाला कहां है बिटिया ! वह तो गुस्से में कह दिया था। चल वापस चल—” उसके सिर पर हाथ फेरता हुआ वह बोला, “तू ने भी तो बेकार ही बीबी जी के कपड़ों पहन लिये। क्या सूझी थी तुझे ?”

वह कुछ न बोली। केवल रोती ही रही। बदली में छोटे-छोटे तारों की माला लम्बी होकर बढ़ती गई। उसकी हिचकियों ने, सांसों की गहरी-गहरी आहों ने, रात के वातावरण में ऐसा दर्द घोल दिया कि राय साहेब भी तड़प कर रह गये। इन आंसुओं की कीमत क्या है ? यह क्यों वह रहे हैं ? किसके लिये वह रहे हैं ? वह सोचें बिना नहीं रह सके।

“मुझे जाने दो काका, मेरे कारण सरकार को बहुत दुख हुआ है—” वह अपने आंसुओं को पोंछती हुई आगे बढ़ गई।

लेकिन तब ही रामू माली वहां आ गया। दीनू बाबरची और घर के दूसरे नौकर भी आ गये।

“तू नहीं जायेगी बिटिया—नहीं जायेगी। हम तुझे नहीं जाने देंगे—” लगभग सब ने ही एक साथ कहा।

अपने प्रति सबके दिलों में इतना प्यार देखकर उसका दिल भर आया। परन्तु फिर भी वह नहीं मानी। रो-रो कर जाने की जिद करती ही गयी।

“अच्छा बिटिया, जाना ही है तो कम चली जाना। इतनी रात में तू कहां भटकती फिरेगी ? यह बम्बई शहर है और तू एक कमजोर लड़की—हम में से एक भाई की पवित्र अमानत। हम तुझे यूँ इस तरह नहीं जाने देंगे—” कहते-कहते माली ने उसके हाथ से कपड़ों की गठरी छीन ली।

पारो उससे लिपटकर रो पड़ी। बहुत देर तक उसी प्रकार सिसकती रही और राय साहेब ऊपर अन्धेरे की ओट लिये छज्जे में से उसे देखते रहे—खामोश, गुम-सुम। उनकी आंखों में भी आंसू छलक आए थे। दिल में एक दर्द-सा उठ रहा था। यह दर्द कैसा है ? यह टीस क्यों उठ रही है ? इसमें कोई सहानुभूति छिपी है या कोमल-सा प्यार ? परन्तु इसकी

५६ : : रात के फूल

मिठास कितनी ठंडी-ठंडी है। कितना सन्तोष, कितनी शान्ति है इसमें। ऐसा तो उन्होंने आज तक नहीं अनुभव किया। आज पारो को बेहोशी के संसार में पड़ा देखकर वह अपना संसार खो बैठे थे। दिल का वह वैर्य खो बैठे थे जिसके सहारे उनके प्यार की याद पवित्र थी। कितना प्यारा, कितना भोला मुखड़ा था उसका। कोमल सा-शरीर सख्त संगमर-मर के फर्श पर वेदर्दी से पड़ा हुआ यूँ लग रहा था मानो एक फूल को तोड़ कर आग पर फेंक दिया हो। जाने क्यों उन्हें ऐसा महसूस हुआ मानो उन्होंने पारो का नहीं अपनी पत्नी का अपमान किया है। उस सुहाग के मुख जोड़े का अपमान किया है जिसे पहन कर पारो ने उनकी पत्नी की पवित्र आत्मा अपने में समा ली थी। आखिर वह क्यों इतना जोश में भर गये थे? क्यों एक गरीब और भोली-भाली लड़की पर हाथ उठाकर अपने प्रेम की याद का सच्चा सबूत दे रहे थे? पारो उनके ड्राईवर की लड़की अवश्य थी। उनके टुकड़ों पर पल कर जवान हुई थी, परन्तु आवाज उसके गले की, अपनी ही है। उस पर किसी का अधिकार नहीं। फिर भी उसकी तड़प मिटाने के लिये, उन्हें चैन की नींद सुलाने के लिए उन्हें सपनों के संसार में भेज कर इस जालिम वातावरण से बचाने के लिये वह अपनी सुरीली आवाज का का मुफ्त सौदा करती रही है। आज एक अरसे से वह उनकी शान्ति का, शान्तिपूर्वक निद्रा का कारण बनी हुई है। वह उसी के सहारे तो जीवित हैं। वह तो उनका जीवन, उनका आत्मा है। क्यों नहीं उन्होंने इस आत्मा को बहुत पहले ही पहचान लिया? क्यों वह उसकी समीपता से भी अब तक दूर रहे?

क्यों उन्होंने अपने दिल के दर्द की दवा अब तक नहीं पहचानी थी?

दूसरे दिन दफ्तर में प्रभा का फोन आया तो उन्होंने सीधी-सादी बातों में उत्तर देकर शाम को क्लब में मिलने का वादा कर दिया। परन्तु शाम को वह क्लब गये नहीं। प्रभा के प्रति उनकी दिलचस्पी अपने आप ही कम हो गई थी। इस प्रकार जैसे एक सितारे की मांग करते करते किसी बच्चे ने चांद देख लिया हो। और इसी लिये वह सीधे हवेली लौट आए। आज फिर उन्होंने कराव नहीं पी। कुछ देर सान में बैठे शाम की ठंडक का आनंद लेते रहे परन्तु नजरे बेचैन थीं

राज के फूल : : ५०

जैसे किसी को ढूँढ़ रही हो। हर कोना पर जा-जा कर लौट आती थीं। हर तरफ मिराशा थी, हर तरफ उदासी। परन्तु उन्होंने अपने दिल की परेशानी तथा अशान्त नजरों की खोज का किसी को जरा भी ज्ञान नहीं होने दिया। किस प्रकार वह पारो के बारे में कुछ पूछ भी सकते थे, जिसे उन्होंने एक थप्पड़ के साथ घर से बाहर निकल जाने की आज्ञा दे रखी थी? समय कटते-कटते जब अंधकार में परिवर्तित हो गया तो वह उठकर अपने कमरे में चले आए।

पारो को सख्त बुखार था इसलिये वह सुबह हवेली छोड़कर नहीं जा सकी। रात भर अपनी कोठड़ी में पड़ी बुखार से तपती रही। सुबह होने से पहले आंख लग गई। फिर कई बार आंखें खुलीं, कई बार आंखें बन्द हुईं। वह चाह कर भी नहीं उठ सकी। उसके नन्हें से दिल की चोट ने कोमल से शरीर में निराशा और जखन की आग भर दी थी।

आधी रात का समय था और बुखार की आग में वह झुलस रही थी। आंखों में अन्धेरा-सा छा रहा था और दिल की धड़कनें थी कि बस डूबती ही प्रतीत हो रही थीं। शरीर बेहोशी की गोद में पैर पसार रहा था। अचानक उसकी कोठरी का दरवाजा खुला। उसने अपनी बोझिल नजरें उठायीं। खिड़की से आती रोशनी में उसने देखा, रामू काका खड़े थे।

“बिटिया—” वह बोला, “सरकार तुम्हें याद कर रहे हैं। उन्हें नींद नहीं आ रही है।”

वह कुछ नहीं बोली। होठों को दबा कर साहस बटोरती हुई वह उठ कर खड़ी हुई। एक गहरी सांस लेकर उसने अपनी खोई हुई ताकत का कुछ भाग समेटा और पास रखी शाल उठा कर शरीर पर डाल लिया। कांपते पैरों से वह हवेली के अन्दर दाखल हुई। राय साहेब एक सोफे पर घँसे फर्श पर नजरें झुकाए चुपचाप बैठे किसी विचार में गुम थे। आंखों पर नींद का बोझ था, परन्तु दिल इसे स्वीकार करने से इनकार कर रहा था। पैर पर पैर बढ़ा कर उन्होंने अपनी पीठ को सोफे पर लगभग लेटते हुए टिका रखा था जैसे नींद पाने

५८ :: राख के फूल

का बहुत प्रयत्न किया। ^{Digitized by eGangotri and Sarayu Trust} परन्तु वह पारो की आवाज के मोहताज थे। उसके गले से निकलते मीठे रस को कानों द्वारा दिल में उतार कर अपनी परेशानी की कड़वाहट को कम करना चाहते थे। वह इसके लिये मजबूर थे। उनके जीने के लिए और कोई साधन ही नहीं था।

पारो ने उन्हें देखा। कुछ देर यूँ ही देखती रही। शायद वह कुछ कहे। परन्तु जब उसके खामोश प्रश्न का उत्तर खामोशी में मिला तो वह अपने आप ही प्यानों पर बैठ गई। बुखार से तपती उसकी गरम-गरम नाजूक अंगुलियाँ प्यानों की टुन-टुन और टन-टन से रात की खामोशी का सीना चीरने लगीं। आवाज दिल के तार को छू रही थी जैसे बर्फ की सिल पर कोई नोकीली छुरी रख कर दबा रहा हो। फिर उसके होंठ काँपे। एक हल्की-सी आवाज दिल की गहराई से निकल कर कमरे के वातावरण पर छा गई। देर तक हवेली के अन्दर घूमती-फिरती हवाओं के तार पर थिरकती रही। एक शान्ति-सी वहाँ पर छा चुकी थी। बेकली-सी समाप्त हो चुकी थी। हर तरफ खामोशी थी, और इत खामोश हवा के रेशमी परदों पर चल रही थी पारो की एक आवाज, ऊँची-नीची होकर जैसे बादलों से कोई पुकार हवा का दामन थाम कर होले-होले आ रही हो। दिल के टूटे तार की इस भंकार ने हवेली के चप्पे-चप्पे पर नींद की मोहर लगा दी। नौकर-चाकर सब ही सपनों के सँसार में बह गये। परन्तु राय साहेब की आँखों को एक झपकी तक नहीं आई। शायद अब वह सोना भी नहीं चाह रहे थे। पारो से दिल की बात कह कर अपना बोझ हल्का करना चाहते थे। जिस परेशानी ने उन्हें दो दिन से पागल बना रखा था उसे समाप्त करके ही वह सो सकते थे। ऐसा ही उनका विचार था और शायद इसीलिये उसकी आवाज में डूब कर यदि उनकी आँखें बन्द भी होने लगती तो वह दिमाग को एक झटका देकर जगा लेते।

पारो ने आवाज को धीमी लय में लाकर थोड़ी-सी गुन-गुनाहट के बाद समाप्त कर दिया। उसका विचार था कि राय साहेब सो चुके हैं। अभी वह उठ कर खामोशी से जाने ही वाली थी कि राय साहेब

राख के फूल : : ५६

“और गाओ पारो, भुके नींद नहीं आ रही है।”

और पारो ने फिर प्यानो पर अंगुलियां रख दीं। फिर वही संगीत छेड़ दिया, उसी लय के उतार-चढ़ाओं में, और वह गाती रही-गाती रही, वही एक गीत जो राय साहेब के जीवन की आत्मा बन चुका था, उनकी प्यास का अमृत बन चुका था, उनकी रातों की नींद और नींदों का सपना बन चुका था। वह गाती रही, वहाँ तक कि उसकी सांसें थक गईं, गला भरने लगा, आवाज बहक बहक-सी गई, आंखों के सामने अन्धेरा-सा छाने लगा, अंगुलियां काँपने लगीं। और फिर उसे एक चक्कर-सा आया और एक झटके के साथ उसने अपना सिर प्यानो के नोट्स पर गिरा दिया। एक भ्रंकार-सी पैदा हुई जैसे गिटार के सारे तार इकट्ठा ही टूट गए हों। फिर सब कुछ खामोश हो गया। वह भी खामोश पड़ गई। आवाज घुटकर रह गई।

“अरे! पारो—?” राय साहेब झट उठ खड़े हुए जैसे नींद में कोई सपना देख लिया हो, “क्या हो गया?”

और जब कोई उत्तर नहीं मिला तो वह चल कर उसके समीप आए। उसे उठाने के लिये जब उन्होंने हाथ लगाया तो घबरा गये। उफ़! यह क्या हो गया? उसका शरीर तो आग की भट्ठी के समान जल रहा है। उनके होश जाते रहे। तुरन्त ही उन्होंने पारो को हाथों पर उठाया और अपने पलंग पर लिटा दिया। डाक्टर को फोन किया और फिर उसके सिरहाने बैठ गये। बहुत देर तक उसके माथे पर हाथ रख कर वह हल्के-हल्के दवाते रहे जब तक कि डाक्टर वहाँ नहीं आ गया।

दूसरे दिन सुबह लगभग सात बजे हवेली में फोन की घंटी बजी। राय साहेब ने लपक कर रिसीवर उठाया।

“हलो—?” वह बोले।

“कौन, राय साहेब—?” उधर से आवाज आई।

“हां।”

“मैं प्रभा बोल रही हूँ।”

६० : : राख के फूल

“कल आप कहां थे ?”

“कुछ आवश्यक काम में फंस गया था ।”

“अभी दफ्तर तो आ रहे हैं न ?”

“नहीं प्रभा । मुझे इसी समय दिल्ली जाना है । शायद फिर और भी कहीं जाना पड़े ।”

“दिल्ली ?”

हां । बाहर कार पर कुछ लोग खड़े इन्तजार कर रहे हैं । प्लेन छूटने में केवल आधा घंटा है ।” उन्होंने झूठ का सहारा लिया ।

“परन्तु मैंने तो मंगनी का सारा प्रबन्ध कर लिया है । कितनी सहेलियों को नेवता भी दे चुकी हूं ।”

“लेकिन...” वह अजीब मुसीबत में फंस गए ।

“लेकिन-वेकिन कुछ नहीं” । वह जिद्दी बच्चे के समान प्यार से मचल कर बोली—“आज आपको रुकना ही पड़ेगा ।”

“नहीं प्रभा, मुझे जाना ही है ।”

प्रभा लाजवाब हो गई । कुछ देर खामोश रही ।

“अभी आप कुछ देर के लिये नहीं मिल सकते ?” वह फिर बोली ।

“मैंने कहा न मुझे तुरन्त जाना है । मैं पहुंचते ही पत्र लिखूंगा । अच्छा, बाई ।”

“बा...ई...।”

फोन रख कर जब वह पीछे पलटे तो पारो होश में आ चुकी थी । छोटे-से बच्चे के समान वह टुकर-टुकर उन्हीं को देख रही थी । उनकी बातों का नाटक उसकी समझ से बाहर था । अपनी ओर उन्हें आता देख कर अपने पैरों को समेटती हुई वह उठ बैठी ।

“अरे ! यह क्या - ?” राय साहेब उसके समीप आते हुए बोले, “डाक्टर ने उठने को मना किया है । लेटी रहो ।”

पारो ने हिचकिचाहट सहसूस की परन्तु राय साहेब ने सहारा देकर उसे पलंग पर फिर लिटा दिया ।

राख के फूल : : ६१

“घबराओ नहीं पारो” यह गोपनीय साक्ष्य पाए जाते हुए बोले,
 “यह तुम्हारा ही घर है। इस घर की रौनक केवल तुम ही हो। तुम
 यहां की आत्मा हो। तुम्हें कुछ हो गया तो इस हवेली का क्या
 होगा?”

पारो ने सिर नीचे झुका लिया। एक ओर रखे तकिये को देखने
 लगी, जहां मालकिन ने अपने हाथों से सुनहरे तारों द्वारा अंग्रेजी में
 काढ़ रखा था “फारगेट मी नाट।” लगभग दस वर्ष हो रहे थे इन शब्दों
 को लिखे हुए परन्तु राय साहेब की याद के समान इनकी चमक भी अब
 तक ताजा थी।

“पारो उस बात को भूल जाओ। मैंने सचमुच तुम पर बहुत बड़ा
 जुल्म किया है।”

राय साहेब की आंखों में आंसू आ गये। अपने चेहरे के भाव
 छिपाने के लिए वह खड़े हो गये और दूसरी ओर मुंह फेर लिया। वह
 यह भूल रहे थे कि पारो उनकी इस शर्मिन्दगी को सामने रखे आइने
 द्वारा बहुत गौर से देख रही है।

पारो का मन खुशी से पागल हो उठा। उसका दिल चाहा कि
 वह राय साहेब के कदमों में विछ जाये। उनके चरणों में सिर टेक कर
 अपना दम तोड़ दे। उनकी सेवा में अपना सारा जीवन व्यतीत कर
 डाले। खुशी की यह लहर उसे आकाश की चोटियों पर ले उड़ी। सारा
 बुखार, सारी जलन, सारी थकावट, सब एक ही पल में उतर गयी।
 वह एकाएक उस फूल के समान खिल उठी जो दिन की धूप में जलते-
 जलते मुझा चला था, कि अचानक बादल आने से पहले ही वर्षा हो
 गई।

“तुम्हारी तबियत ठीक होते ही हम पहाड़ चलेंगे।” राय साहेब
 फिर बोले, “यहां बरसों से अकेले रहते-रहते मैं ऊब-सा गया हूं। जी
 चाहता है जीवन के कुछ दिन तो कम से कम शान्ति से व्यतीत कर
 लूं। अब तुमसे बात करता हूं तो ऐसा लगता है कि शायद मैं जी लूं,
 कुछ और दिन मेरा मन बहल सकता है। जीने का सहारा मिल सकता
 है।

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust
है। जाने क्यों मुझे अजीब-जरा भी शराब की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती।”

जाने कौन-सी ऐसी झनकार उसकी सांसों में छिपी हुई थी कि हर बार कहते-कहते जब भी उन्होंने उसे देखा, उसके दिल में एक अजीब-सी मिठास पैदा हो गई। अपने आपको भूल कर अपने आप ही उसके होठों की दरार में साँप फैलते गए और नन्हें-नन्हें गढ़े आपस में मिल कर उसकी कोमलता को दुगुना कर जाते रहे। निगाहें भुंक गईं और गलों पर कई रंग एक साथ तैर गये। वह इस वास्तविकता को समझ ही नहीं पा रही थी जो अपने आप ही उसके दिल की गहराई से बन-बन कर फूट रही थी।

Usha

ऊँचे-नीचे दूर तक फैले हुए पहाड़ों की गोद से निकलती लम्बी-सी झील अपना आँचल फैलाये पहाड़ी इलाका के सारे वातावरण को यूँ अपनी ठंडी-ठंडी सुगन्ध में डुबोये हुए थी कि राय साहेब का तपता दिल भी इसके वहाव में आकर शांति का आभास करने लगा । ऊँचे-ऊँचे चिनार और देवदार के पेड़ों ने आकाश तक अपने हाथ फैला कर भगवान से यहां की सुन्दरता की भीख प्राप्त कर रखी थी । एक तरफ पहाड़ों को अपनी बाहों में समेटती तारकोल की पतली साफ-सुथरी सड़क दूर तक ऊपर को चली गई थी । इसके दूसरी ओर गहरी-गहरी खाइयां मुंह फाड़े सांय-सांय कर रहीं थी, परन्तु इनके ढालवानों पर छाए चिनार और देवदार के पेड़ों की सुगंध में डूबकर यह खाइयां भयानक हीने के कारण पहाड़ों की सबसे बड़ी कशिश बन गई थीं । राय साहेब एक युग के बाद जब इस खुले-खुले वातावरण में आए तो उन्हें जीवन का एक नया ही अनुभव प्राप्त हुआ । अपने को मम के संसार से बचाये रखने का वहाना लेकर सुबह से शाम तक कोलू के बैल के समान काम का एक ही चक्कर लगाये रखना कहां का जीवन है ? यह तो एक झूठा सन्तोष है । एक गलत तसल्ली है । अपने आपको धोखा देकर वह समय से पहले ही क्यों बूढ़े हो गए ? क्यों आयु से पहले ही मौत की आस लगाये बैठे हैं ? भगवान की दी सुन्दर जिन्दगी का यह सबसे बड़ा दुरुपयोग है । शरीर की आशाओं और इच्छाओं को बूढ़ा बनाये रखना जवानी का अपमान है । जवानी ही जीवन की सबसे बड़ी दौलत है । फिर इसके साथ यह जुलम क्यों ? राय साहेब को

६४ :: राय के फल

जीने की इच्छा हुई। अभी समय नहीं बीता था जो खोई हुई खुशियाँ वापस नहीं आ सकें। लोग ठीक कहते हैं। धरती के ऐसे सुन्दर भागों में जो शांति और सन्तोष छिपाकर भगवान ने अपनी प्रकृति का प्रदर्शन किया है वह किसी और स्थान पर नहीं। हर रोग का इलाज अपने आप ही यहाँ हो जाता है।

होटल का लान मौसमी यात्रियों से भरा हुआ था। जवान, बूढ़े सब ही रंग-विरंगे वस्त्रों में लिपटे लान-बेयर्स पर टांग फैलाये बैठे दूर से यूँ दीख पड़ रहे थे मानो घास की हरी चादर पर ढेर सारे बेल-बूटे किसी ने काढ़ दिये हों। हर एक की टेबुल पर कुछ न कुछ रखा था। काफी के खूबसूरत सफेद-सफेद प्याले या फिर शराब के पतले-पतले जाम जिसमें तरह-तरह की शराब का रंग झलक रहा था। शराब का दौर चलाना आज के फैशन की पुकार है, विशेष कर ठंडे स्थान में, जहाँ इसके बिना लोगों का किसी काम में मन ही नहीं लगता। एक ओर सनचले नौजवान लड़के-लड़कियाँ चुस्त कपड़ों में सूसज्जित राक एन्ड रोल, चा-चा-चा और टुप्पिस्ट करने में मग्न थे। इनके वस्त्र इतने तंग थे और शरीर में यूँ चिपककर रह गये थे कि उनका अंग-अंग फूट पड़ता था। ऐसा मालूम पड़ रहा था जैसे इन लड़के-लड़कियों ने कपड़े सिलवा कर नहीं बल्कि पहन कर सिलवाये हैं। आर्कस्ट्रा की धुन में इनके थिरकते हुए शरीर रंग-विरंगे वस्त्रों में होटक की शान और वातावरण की शोभा बढ़ा रहे थे।

इसी लान में एक ओर राय साहेब भी बैठे हुए थे। उनके सामने काफी की दो प्यालियाँ रखी हुई थी जिसकी परवाह किये बिना वह बड़े चाव से थिरकते लड़के-लड़कियों को देख रहे थे जिनके मुखड़ों पर इस समय कोई गम, कोई परेशानी नहीं झलक रही थी। कितने बेफिक्र और खुशहाल थे वे। सामने पारो बैठी हुई थी, सफेद ऊन के शाल में लिपटी, बिलकुल गुड़िया के समान। ऊन के बड़े-बड़े नर्म रेशे उसकी गर्दन और कभी-कभी कान और गालों को भी प्यार करने की शरारत कर लेते थे। उसकी सादगी में इतना आकर्षण था मानो सारे पहाड़

राख के फूल : : ६५

वर्फ का लवादो ओढ़े उसके कदमों में सरक आये हों ।

पारो खामोश थी । खामोशी से राय साहेब को लगातार देखे जा रही थी परन्तु उसके मन में एक अजीब-ही हलचल थी । वह सोच रही थी क्या राय साहेब अपने खान्दान का नाम ऊँचा रखने के लिये यह कभी भूल सकते हैं कि वह उनकी नौकरानी है ? उस डाइवर की बेटी जिसने जीवन भर राय साहेब के घर का नमक खाया है ?

परन्तु राय साहेब अपनी ही धुन में मग्न थे । और जब आर्कस्ट्रा की आवाज अचानक थम गई, जैसे समुद्र का उठता शोर एकाएक रुक गया हो, तो उन्होंने अपना ध्यान पारो की ओर समेटा ।

“पारो—”

“हूँ”

“तुम घूम आओ, कहीं जाती नहीं हो, वस यूँ ही बैठी रहती हो ।”

“घूम तो चुकी हूँ इतना । सब ही कुछ तो आपने दिखा दिया ।”

“मैं तो बहुत कम स्थानों पर तुम्हें ले गया हूँ—” वह सिप्रेट का कश लेते हुए बोले, “यह इलाका तो बहुत बड़ा है । हर कदम पर एक सुन्दरता प्रतीक्षा करती मिलती है ।”

“नहीं सरकार...”

“शी...” राय साहेब ने उसे रोक दिया, “मैंने तुम्हें मना किया है कि तुम मुझे सरकार कभी नहीं बोलो । यदि जरा भी मेरी मान मर्यादा का विचार है तो कुछ और कहो । मेरा मतलब...और लोगों के समान तुम मुझे राय साहेब भी तो कह सकती हो ।”

पारो चुप हो गई । सिर नीचा किये राय साहेब की कृपा की सीमा नापती रही । फिर कुछ देर बाद बोली —

“कुछ भी हो, लेकिन मैं आपके बिना कहीं नहीं जाऊंगी ।”

राय साहेब ने कोई उत्तर नहीं दिया । वह जानते थे पारो उनके बिना एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकती चाहे वह उसके साथ कार भेजें या गाईड । उन्हें पारो की हर बात से, उसके हर

६६ :: राख के फूल

काम से अपने प्रति एक मीठा-मीठा-सा प्यार झलकता प्रतीत होता । पारो की निगाहों में वह अपनी खुशियों का अथाह सागर देखते । उसकी सांसों से उनके प्रति ऐसी शांति झलकती कि वह इसे अपने दिल की गहराई में छिपाकर रख लेना चाहते । उसके प्यारे-प्यारे होठों से मीठे शब्दों का समूह यूँ निकलता मानो हजारों फूल की पंक्तियाँ आकाश से झड़-झड़ कर हवा के वातावरण को सुगंधित कर गई हों । उन्नीस-बीस साल की इकहरे शरीर वाली दुबली-पतली लम्बी-सी पारो, जिसका अँग-अँग भगवान ने बड़ी कोमलता से छांट-छांट कर जोड़ा था, सारे पहाड़ की बहार बन कर उनके मन-मंदिर में छाई हुई थी । परन्तु अचानक ही वह चौंक पड़े, इस प्रकार मानो कोई सपना देख रहे थे । पारो और उनकी आयु में एक शताब्दी का अन्तर है । पहाड़ की ऊँचाई और खाई की नीचाई की सी दूरी है । क्या वह अपने एहसानों द्वारा पारो के मन को खरीदने का तो प्रयत्न नहीं कर रहे हैं ? उसकी गरीबी से लाभ तो नहीं उठा रहे हैं ? क्या पारो का मन उनके आगे झुक सकता है ? क्या वह वास्तव में उनसे प्रेम कर सकती है ? उनकी पत्नी की छोड़ी हुई खाली जगह भर सकती है ? वह प्यार न सही, अपना प्यार अपने तरीके से ही, दिल-व जान से दे सकती है ? प्यार में दीलत और गरीबी का भेद नहीं होता । प्यार में सुन्दरता और कुरूपता का भेद नहीं होता । प्यार में ऊँच-नीच, जात-पात का भेद नहीं होता । परन्तु आयु—? आयु क्या प्यार के इस भेद-भाव को मिटा सकती है ? आज तक किसी ने इस पर अपना विचार क्यों नहीं प्रकट किया ? क्या प्यार केवल आयु का ही विचार रख कर होता है ?

“हां—” ख्यालों के बहाव में आकर एकाएक उसके मुँह से निकल गया और तब ही वह चौंक पड़े । पारो उन्हें बहुत गौर से देख रही थी ।

“आप कुछ परेशान हैं—?” उसने पूछा ।

“हां पारो—” काफी की प्याली उठा कर वह बोले, जो उनके विचार के समान ठंडी हो रही थी ।

“मेरे योग्य कोई सेवा हो तो बिना झिझक कह दिया कीजिये ।

राख के फूल : : ६९

मेरा मन कहता है आपकी सेवा में सारा-जीवन बिता दूँ।”

“सेवा—?”

“हां—हां, कहिये ना।” पारो ने प्यार से जिद पकड़ी।

“पारो, एक बात बहुत दिन से कहना चाहता हूँ...बल्कि यूँ कहो कि पूछने का साहस करना चाहता हूँ, यदि तुम बुरा न मानो।” राय साहेब कुछ हिचके, कुछ शर्मसार हुए। दिल की बात छिपाने में तकलीफ-नी हो रही थी।

“दिल पर यदि कोई बोझ हो और आप समझते हैं कि मैं उसे हल्का कर सकती हूँ, तो अवश्य कहिये। भगवान साक्षी है, मैं अपनी जान देकर भी आपको सुख देने का प्रयत्न करूँगी।” पारो जैसे प्यार के सागर में डूब कर बोली।

“तुम...पारो तुम...बहुत खूबसूरत हो” राय साहेब ने कहते-कहते अपने दिल की बात छिपा ली।

“आप कुछ और कहना चाहते थे, शायद” पारो ने दिल का चोर पकड़ा, “आप शायद भूठ बोल रहे हैं।”

“तो सच्चाई क्या है?”

“सच्चाई!” पारो सोच रही थी, क्या उत्तर दे। उनके दिल का भेद जानने के लिए वह स्वयं उत्सुक थी। “आप प्रभा मालकिन को कब घर ला रहे हैं?” उसने बात पलट दी।

“पारो—” राय साहेब ने ऐसा मुँह बनाया जैसे काफी पीते-पीते अचानक ही शराब का ग्लास मुँह में लगा गये हों।

“मुझे क्षमा कीजिये—” पारो जल्दी से बोली, “घर के नौकर ही बता रहे थे कि आप...”

“यह सब भूठ है पारो” राय साहेब तड़प कर बोले, “तुम किसकी बात में आ गयी? हाँ, उस दिन...उस दिन जब वह हमारे घर आई थी तो उससे पहले तक मेरा इरादा कुछ ऐसा अवश्य था।”

“अब क्या हो गया?”

“अब...?”

६८ :: राख के फूल

“हाँ” पारो ने बड़ी उत्सुकता से पूछा।

“पहले शराब के सहारे भूठी-खुशियों का बहाना लेकर जीना चाहता था।” वह उसकी आँखों में आँखें डाल कर बोले, “लेकिन अब ऐसा लगता है जैसे यह सब धोखा है। अब मैं चाहता हूँ कि जीवन की वास्तविक खुशियों को वास्तविक रूप में प्राप्त करूँ। शराब का सहारा लेकर नहीं: नलिक...बलिक...” वह कहते-कहते रुक गये।

पारो का दिल गुदगुदा कर रह गया। जाने क्या वह कहना चाहते थे, परन्तु उनके दिल की बात पूरी तरह भाँप सकने के बाद भी वह किसी प्रकार का अनुमान लगाने का साहस नहीं कर सकी। नौकरानी और मालिक के रिश्ते में झिझक की दीवार कमजोर होने के पश्चात् भी बहुत ऊँची थी।

“ऐसी कोई बात तो अवश्य ही है जिसने आपको जीना सिखा दिया?” पारो ने बहुत बेचैनी से पूछा।

“हाँ पारो...हैं तो जरूर...मगर डरता हूँ...बहुत डरता हूँ कि यदि दिल का राज खुल गया तो इस झुठे सहारे से भी हाथ धोना पड़ेगा—।”

“आपको मेरी सौगंध है, मुझे बताइये, वह क्या सहारा है आपकी खुशी का? मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ, आप कभी निराश नहीं होंगे—” पारो ने मचल कर कहा, “जब तक आप नहीं बतायेंगे मेरा एक-एक पल कटना मुश्किल होता रहेगा।”

“बता दूँ पारो—?”

“हाँ-हाँ—”

“दुरा तो नहीं मानोगी?”

“मर कर भी नहीं—”

राय साहेब ने देखा उसकी आँखों में चमक थी—बहुत अधिक चमक जैसे पूनम की चांदनी एक स्वच्छ झील की सतह पर आराम से सो रही हो, जैसे घने काले बादलों के पर्दे से सूरज के बाद की सफेद हल्की-हल्की रोशनी फूट रही हो।

“मैं...” राय साहेब कुछ सोच कर बोले, “मैं...”

राज के फूल : : ६३

और तब ही होटल का मैनेजर उनके सामने आ खड़ा हुआ। उस साथ एक नौजवान आदमी भी था—खूबसूरत हट्टा-कट्टा, घनी-घन पलकें, बड़ी-बड़ी आंखें काली रात के समान, साँवला रंग, ऊँचा कद ऐसा लगता था जैसे यह जानी-पहचानी सूरत है। कहीं देखा है इसे उसके आते ही आर्केस्ट्रा की धुन रुक गई, इस प्रकार मानो रेडियों आ के बजते-बजते विजली बन्द हो गई हो। लड़के-लड़कियां उसी की ओर बढ़ते चले आ रहे थे। दूसरे लोग भी बड़ी उत्सुकता से उसे देखने में मग थे जैसे उसका इस प्रकार यहां आ जाना एक अचंभा ही हो।

राय साहेब ने नजरे उठाई। उसे देखा, परन्तु बैठे रहे। पारो भी बैठी रही परन्तु राय साहेब से अधिक आश्चर्य और दिलचस्पी से उसे क्यूँ देख रही थी जैसे जीवन में पहली बार ऐसा आदमी देखा हो जिसका मुखड़ा सुन्दरता की रोशनी से बहुत अधिक चमक रहा था।

“राय साहेब—” होटल के मैनेजर ने कहा, “यह आप से मिलन चाहते हैं। यह हैं मिस्टर दीपक, भारतवर्ष के सर्वश्रेष्ठ और माने हुए अभिनेता। इन्हें इस साल सबसे अच्छी अदाकारी पर भारत सरकार ने पुरस्कार भी प्रदान किया है। दो ही वर्ष में भारतीय फिल्मों में संचार का चप्पा-चप्पा अपनी कला से जीत लेने का केवल इन्हीं को श्रेय है।”

राय साहेब फिर भी बैठे रहे परन्तु पारो खड़ी हो गई। जीवन में पहली बार इतना समीप होकर वह एक कलाकार को देख रही थी, बहुत गौर से जैसे आकाश से एक सितारा उत्तर कर धरती पर आ गया हो।

राय साहेब ने उसी प्रकार दीपक से हाथ मिलाया। उसे सामने बैठाया और गौर से देखने लगे। बेटर दो कुर्सियां और ले आया तो मैनेजर भी वही बैठ गया। पास में पारो ने स्थान बना लिया। उसका मन था यहां से चली जाये। शर्म और झिझक से उसका मुखड़ा झुका जा रहा था। परन्तु राय साहेब की नजरों का इशारा पाकर उसे बैठना ही पड़ा। राय साहेब की बात अधूरी रह जाने को उसे बहुत अफसोस था। बैठते-बैठते दीपक ने पारो पर एक भरपूर नजर डाली।

“यह पारो है—केवल पारो—” राय साहेब दीपक को आंखों में प्रशनीय चमक देख कर तुरन्त बोले।

७० :: राख के फूल

पारो ने हल्की सी मुस्कराहट से नमस्ते के लिये हाथ जोड़ दिये । उसके होठों पर आई एक प्यार की हल्की-सी रेखा देखकर राय साहेब तड़प उठे । मर्द जिसे चाहता है उसकी एक-एक अदा, एक-एक मुस्कराहट फूल-से झड़ते एक-एक शब्द पर, केवल अपना अधिकार ही रख लेना चाहता है । पारो उनके दिल में उठते तूफान के शोर से लापरवाह अपनी ही दुनिया में डूबी हुई थी । उसे यहां बैठ कर जरा भी अच्छा नहीं लग रहा था । वह इतना जानती थी कि उसे राय साहेब से प्यार है । वह उन्हें सच्चे मन से प्यार करती है, पूरी जान, पूरी ताकत से, और उनकी खुशी के लिये वह अपना तन, मन तथा आत्मा गंवाने से भी नहीं चूकेगी ।

दीपक पारो को देखता ही रह गया । पिछले दो साल के युग में बम्बई की फिल्मी दुनियां से उसने एक बहुत ही सुन्दर अनुभव प्राप्त किया था । जीवन की पिछली बातों को एक सपना समझ कर भूलते हुए उसने अपनी आंखों से सुन्दरता की अच्छी से अच्छी कलाओं को परखा । उसकी नजरों में कैमरे का लैन्स था । देखने का अन्दाज था । यही कारण था कि कैमरामैन उसकी इच्छा का विरोध नहीं करते । डाइरेक्टर उसकी राय पर चलते थे । प्रोड्यूसर को उसकी बातों से सहमत होना पड़ता था । अपनी दिन-रात की मेहनत से उसने पहली ही फिल्म में ऐसी इज्जत पाई कि भारतवर्ष का सबसे महान अभिनेता हो गया । अनगिनत फिल्मी कौन्टाक्ट उसकी दूसरी फिल्म पूरी होने से पहले ही, पूरे-पूरे एडवांस के साथ, मिल गये । उसे खुद अपने भाग्य पर सन्देह था, परन्तु बाद में जल्द ही अपनी मेहनत का अनुमान लगाकर उसे अपने ऊपर भगवान की असीम कृपा का विश्वास करना ही पड़ा ।

पारो के मुखड़े का हर उभार इतना तीखा और सुन्दता से अलग-अलग था कि हर अंग को बार-बार परखने के बाद भी निराशा नहीं मिली । बर्फ के समान सफेद शाल में लिपटी सुन्दरता की यह अतुल्य मूर्ति दीपक की आंखें चकाचौंध कर गई । उसकी तेज आंखों को चमक ने पारो की गर्दन पर कान से होती हुई उस नस तक को देख लिया जिसका नीला-नीला उभार सुन्दरता का एक अनोखा आकर्षण बना हुआ था । शायद इससे राय साहेब भी अब तक अपरिचित थे । शायद वह खुद भी

अपने हम आकर्षण से अनजान थी ।

राय साहेब ने दीपक को देखा । उसकी आँखों में वह चमक भी देखी जो स्वयं उनकी आँखों के समान थी । उन्होंने समझा, बहुत कुछ, दीपक के दिल की गहराई से निकलती एक-एक सांस का अनुमान किया । पारो भी दीपक की आँखों के दायरे से अलग नहीं रह सकी । भारतवर्ष का इतना बड़ा कलाकार, इतना खूबसूरत, इतना गूणी, जिसके एक-एक इशारे पर लड़कियाँ अपनी जान तक देने को तैयार होगी, आज नजरोँ हा नजरोँ में उसके कदम चूम रहा था । कितनी ही लड़कियाँ पीछे खड़ी उससे बात करने की इच्छुक थीं । अपने आटोआफ-बुक लिये उसकी दस्तखत की तरफ रही थी । पारो का मन गर्व से भूम उठा ।

परन्तु राय साहेब पर नजर पड़ते ही उसके मन में गर्व का उठता हुआ यह तुफान एक दम ही थम गया । वह उसी को देख रहे थे । शायद वह उसके दिल में उठते तुफान की लहरों को गिनने का प्रयत्न कर रहे थे । मुखड़ा उदास था, आँखें खाली-खाली, जैसे बहार आते-आते चमन अचानक ही आँधी की लपेट में पड़ कर उबड़ गया हो । मन ही मन लज्जित होकर वह उठ खड़ी हुई ।

“मुझे क्षमा कीजिये... मैं रुम में जाना चाहती हूँ ।” उसने कहा और नमस्ते के लिये हाथ उठा कर चलती बनी ।

राय साहेब कुछ नहीं बोले परन्तु दीपक खड़ा हो गया । हाथ जोड़कर उसने नमस्ते किया और एक गहरी सांस लेकर यूँ बैठ गया जैसे अभी-अभी वह परिस्थान की सैर कर रहा था किसी ने उसे जमीन पर जोर से गिरा दिया ।

“इसका दुनिया में कोई जहाँ, इसीद्विजे मेरे साथ रहती है ।” राय साहेब ने अपने आप ही कहा, “वचन से ही मैंने इसे पढ़ा-लिखा कर इस योग्य कर दिया है कि अपने जीवन का फैसला वह खुद ही कर सके ।”

दीपक फिर भी कुछ न बोला ।

“आप उसकी आवाज सुनेंगे तो चिड़ियों के वच्ची की चूँ-चुँ भी भूल जायेंगे ।” राय साहेब उसे खामोश देख कर बोले, “उसकी आवाज मेरी नादे हैं ।”

दीपक ने इस बार राय साहेब को बहुत गौर से देखा ।

“हमारा सम्बन्ध बहुत पवित्र है—बहुत स्वच्छ—गंगा जल के समान ।”

“आप शादी क्यों नहीं कर लेते ?” अचानक मैनेजर ने कहा,
“आखिर यह अकेली जिन्दगी कब तक ठोकरें खाती रहेगी ?”

“सोचता हूँ कि शादी कर लूँ मगर...”

“मगर क्या ?” दीपक ने उत्सुकता से पूछा ।

“कोई लड़की मिले अपने मन की तब तो कदम आगे बढ़ाऊँ ।”

राय साहेब ने बैरे को इशारे से बुलाते हुए कहा, “अब आप ही देखिये न, मेरी आयु कितनी बीत चुकी है ।” और जब बैरा आ गया तो वह बोले, “आप लोग क्या पियेंगे ?”

“जी, कुछ भी नहीं । शुक्रिया ।”

मैनेजर और दीपक ने लगभग एक साथ ही उत्तर दिया बैरा चला गया ।

“हां, यह तो ठीक है ।” मैनेजर ने बात चलाई, “आपके लिए आवश्यक है कि लड़की पूरी बालिग हो । उमर कुछ तीस-बत्तीस होनी ही चाहिये ताकि वह अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह समझ सके । कम उम्र की लड़कियां तो आज कल...”

राय साहेब आगे कुछ भी नहीं सुन सके । उनकी निगाह सामने वाली ऊपरी मंजिल के कमरे पर पड़ी जहां एक रंगीन पर्दा खिड़की पर लहरा कर हिल रहा था । शायद पारो इन्हीं लोगों को देख रही थी, इन्हीं लोगों को, या शायद...सिर्फ दीपक को, जिसका दर्शन प्राप्त करते हुए इस समय कितनी ही लड़कियां उसके आसपास तितलियों के समान मँडरा रही थी । वह जब कभी अकेले इस प्रकार यहां बैठे हैं तो उस खिड़की पर वह परदा इस प्रकार नहीं हिला ? क्यों ? एक वहम, एक शक, एक डर उनके दिल में जड़ पकड़ चुका था जिसका पौधा हर सांस में फैल-फैल कर उन्हें कांटों के समान चुभने लगा । शक : एक बीमारी, जिसका कोई इलाज नहीं । उनके दिल में कांटों के जहर ने नासूर बना दिया, और वह महसूस कर रहे थे जैसे सड़ा हुआ पीप सारे शरीर में फैल कर उन्हें राख के फूल : : ७३

“हम एक खास काम से आपके पास आये हैं। दीपक ने अपने आने का मतलब प्रकट किया।

“कहिये, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?” अपने विचारों के संसार से वापस आते हुए राय साहेब ने पूछा।

“बम्बई में आपकी कपड़े की बहुत बड़ी मिल है न?”

“हां, है तो—।”

“हम एक फिल्म की शूटिंग में उसका उपयोग करना चाहते हैं।”

“मुझे भला क्या अपत्ति हो सकती है; परन्तु ख्याल रहे, मेरे यहां काम करने वालों की मेंहनत पर इसका कोई असर नहीं पड़ना चाहिये।”

“आप निश्चित रहें। बल्कि हम कोशिश करेंगे कि आपकी मिल की पब्लिसिटी भी हमारी फिल्म में बहुत सुन्दरता के साथ हो सके।”

“आपकी कृपा होगी।”

“कृपा तो आपकी है” दीपक उठते हुए बोला, “अच्छा अब हमें आज्ञा दीजिये। कागजी कार्रवाई के लिये हम बम्बई में आप से मिलेंगे। कब वापस जा रहे हैं आप?”

“शायद तीन-चार दिन बाद ही जाना पड़े।”

“तो फिर ठीक है। मैं भी शायद इन्हीं दिनों वापस जाऊँ। तब तक हमारी फिल्म की यहां पर शूटिंग भी समाप्त हो जायेगी।”

“कहां शूटिंग हो रही?”

“अभी तक कोई साइट निश्चित नहीं हुई। वैसे आप चलरा पसन्द करें तो हम आपको आपने साथ लेते चलेंगे। आपकी तबियत भी बहल जायेगी।”

“सोच तो रहा हूँ—“राय साहेब ने उत्तर दिया, “यदि आप को कोई अपत्ति न हो।”

“आपकी उपस्थिति हमारी खुशनसीबी होगी राय साहेब—” दीपक मन की खुशिया छिपाता हुआ बोला, “मैं कल सुबह गाड़ी लेकर आपकी प्रतीक्षा करूंगा।”

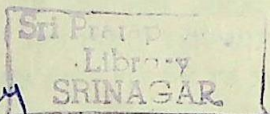
राय साहेब अच्छी तरह जानते थे कि दीपक अपने दिल में उठती

७४ :: राख के फूल

खुशी की मौजों पर गम्भीरता की चादर डाल रहा है। इतना जल्दी उनके साथ घुल-मिल जाने में उसका कोई स्वार्थ ही है। परन्तु उन्होंने इसको ज़रा भी बुरा नहीं माना। यह आयु ही ऐसी होती है कि हर चमकती चीज़ पर नज़र पड़ कर ठहर जाये।

राय साहेब को पारो से शुरू से ही सहानुभूति थी—एक सच्ची सहानुभूति, परन्तु इस सच्ची सहानुभूति के पीछे प्यार का एक छोटा-सा पौधा उनके दिल के चमन में जन्म लेकर धीमे-धीमे अब इतना बढ़ चुका था कि जब भी ख्यालों का एक झोंका चलला, उनके सारे शरीर में शांति की लहर दौड़ जाती। और इस शांति को वह किसी भी कीमत पर खोना नहीं चाहते थे। प्यार के इस पौधे को किसी भी हालत में किसी और के हवाले नहीं करना चाहते थे जिसका बीज अचानक ही अपने आप उनके दिल में एक अरसे के बाद फूट कर निकल आया था। वह इस पौधे को स्वयं सींचना चाहते थे। अपने हाथों द्वारा प्यार से इसे संवार कर एक नया चमन बनाने का सपना देख रहे थे। परन्तु पारो—? वह पारो के दिल की धड़कनों को सुनने के लिए प्यार के इस पौधे की जड़ खोदने पर उतारू हो गये। वह जड़ खोद कर देखना चाहते थे कि उस स्थान पर क्या सभ्यता है। पारो के मन में जाने क्या सोच? एक मासूम लड़की की धड़कने अकल से वंचित होती है। प्यार के जोश में दिल की सच्चाई नाम मात्र भी नहीं होती। कहीं ऐसा तो नहीं कि वह अपनी कमजोरी के कारण ही उनसे प्यार करने पर मजबूर हो? कहीं ऐसा तो नहीं कि अपनी गरीबी को संवारने के साथ उनकी मजदूरी पर तरस खाते-खाते वह उन्हें प्यार करने लगी है? प्यार अपने आप अवश्य पैदा होता है, परन्तु किसी सहारे के बिना हरगिज नहीं। इसके लिये एक रास्ता होता है, एक कारण होता है। शायद उनकी समीपता ही इस समय पारो के दिल की सहानुभूति का कारण है, शायद यह सहानुभूति ही है जो धीमे-धीमे प्यार का रूप पकड़ रही है। इस प्यार के बावजूद कोई स्वार्थ नहीं, कोई भेद नहीं, परन्तु फिर भी यह दिल की हराई से खाली है। जो प्यार का जोश एक लड़की में किसी नौजवान के लिए होता है, वह पारो में अपने प्रति वह कभी नहीं महसूस कर पाया।
राख के फूल : : १५

गहरे सागर में पहुँचा दिया जहाँ केवल सुख था—शांति थी—सुख और
 शान्ति—जिसे पाने के लिये वह जीवन भर तड़पते रहे थे। और अब
 मरने के बाद चिता में स्वयं जल कर उसके लिए राख के फूल छोड़ गए
 थे—केवल राख के फूल जिसे अपनी माँग में भरने के लिये उसे दीपक
 की आवश्यकता थी—केवल दीपक की।



— समाप्त —

*Best interesting
 Novel.*

SPS

891.433 R 19 R



36866

विनाग कि...
 - १ के ही...
 (१) के ही... लॉन्ग - २ बड़े रंगत...
 बुद्धारी... - २... २२२... साथ...
 २२२... जगदी... - बुद्धारी...
 फल बुद्धारी - बुद्धारी...
 विनाग...
 (२) विनाग...
 सम्मिलित... - २, ३...
 २२२...
 १२२ : : राख के फूल
 २-३

बहुल विवेचन विरागि
मा नलको बहुल

13 January 1980

विषय विवेचन
विषय विवेचन
विषय विवेचन

one of the best
Novels of the RANDO.
V. V. V. V. V.
5/02/97

24/1
26/1

Green

Handwritten notes in Urdu script.

یہ فائل راولی کی ایک لہجہ کا
ہے۔ اسے آپ کی فراہم شدہ کپی کے ساتھ

Nanna Jee

5/07/97

Scholar.

Ranu is one of the
best novelists.

Especially in Romantic
writing.

Nannu Jee
12/8/97

H83

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

DATE SLIP

36866

This book was taken from the Library on the date last stamped. A fine of (a) 00.05 paise per book volume for the first 20 days of delay per day. (b) 00.20 paise per book volume per day, of delay thereafter which shall be realised from the defaulters before a new book is issued to him/her.

188

94

188

76/26

20.6.1978

This book was taken from

the library of the date

1.2.76

22.1.77

20.5.77

16.2.77

26.7.77

31.12.77

1/10/77

16.7.77

19.12.77

20.6.78

21.7.79

17/3/81

ਮੁਕਤੀ
ਪਿਤਾ ਬੰਨ੍ਹ ਮੁਕਤੀ

੨੦

੬੧:੧



